ॐ नमः श्री राम लाल प्रभु जी परब्रह्मणे नमः

योग समीक्षा

(श्रीमद्भगवद्गीता और
योग दर्शन पर आधारित)

संग्रहकर्ता
डॉ अमिता रश्मि

प्रकाशक :
योग साधन आश्रम
3 - एल, माडल टाऊन, होशियारपुर (पंजाब)
फोन : 01882-225223

8/3/10

ॐ

ॐ नमः श्री राम लाल प्रभु जी परब्रह्मणे नमः

योग समीक्षा

(श्रीमद्भगवद्गीता और
योग दर्शन पर आधारित)

संग्रहकर्ता
डॉ अमिता रश्मि

प्रकाशक :
योग साधन आश्रम
3 - एल, माडल टाऊन, होशियारपुर (पंजाब)

प्रथम बार 1000
योगेश्वर राम लालाब्द 121
विक्रम संवत् 2066
सन् ई. 2009

भेंट : 50 रुपये

ॐ

योग वन्दना

❖ योग-विद्यां नमाम्यहम् ❖

सौंदर्यलहरीरूपां, तापत्रयविनाशनीम् ।
तेजस्विनीं तपोरूपां, योगविद्यां नमाम्यहम् ।।१।।
संस्थापकां समत्वं तां, शक्तिसृजनकारिणीम् ।
चित्तवृत्तिनिरोधाय, योगविद्यां नमाम्यहम् ।।२।।
अर्धनारीश्वरस्येमां, चैतन्यसार संभवाम् ।
पूर्णरूपकुण्डलिनीं, योगविद्यां नमाम्यहम् ।।३।।

❖ योग तुझे नमस्कार ❖

सुन्दर करे जो देह को, करे दुःखों से पार ।
तेज रूप तप रूप जो, योग तुझे नमस्कार ।।१।।
करे समत्व दान जो, शक्ति सिरजनहार ।
चित्तवृत्ति निरोधहित, योग तुझे नमस्कार ।।२।।
आदिनाथ से ऊपजा, चेतनता का सार ।
जागृत कुण्डली जो करे, योग तुझे नमस्कार ।।३।।
राम लाल जिस का किया, कलियुग में उद्धार ।
मुलखराज के "सेवक", का तुझे नमस्कार ।।४।।

—चमन लाल कपूर "सेवक"

ॐ नमः श्री रामलाल प्रभु जी परब्रह्मणे नमः

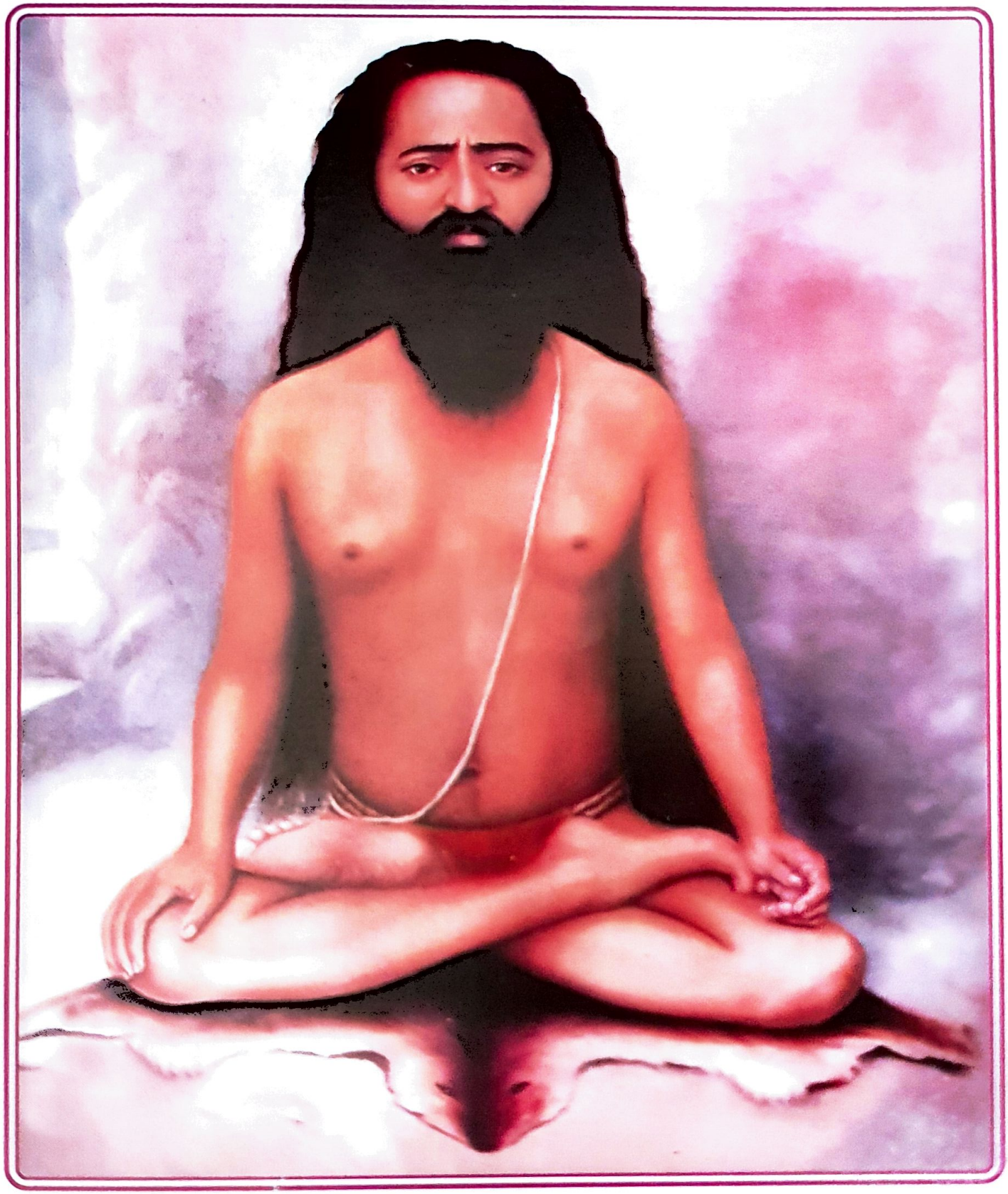

श्री 1008 योगेश्वर प्रभु रामलाल जी महाराज

दो शब्द

प्रस्तुत पुस्तक 'योग समीक्षा' श्री चन्द्रमोहन अरोड़ा के अनुभव और स्वाध्याय तथा सतत प्रयास के फलस्वरूप प्रकाश में आ रही है। इसमें उनकी निजी अनुभूतियों के आधार पर श्रीमद्भगवद्गीता, योग दर्शन और कुछ अन्य योग के साहित्य से उद्धृत प्रमाण सहित लेख हैं।

इन लेखों के अनुशीलन से पाठकों को योग और धर्म का केवल ज्ञान ही नहीं होगा बल्कि योग साधन में प्रवृत्त होने की प्रेरणा भी मिलेगी।

28 अक्टूबर 2009 — ***चमन लाल कपूर***

योग साधन आश्रम, होशियारपुर

योग समीक्षा विषय सूची

क्र.सं.	प्रवचन	पृष्ठ
1.	मोक्ष की प्रथम सीढ़ी विषाद	1
2.	आत्म ज्ञान से ही जीवन बनता है 'स्थिर-प्रज्ञ'	3
3.	योगी कर्म को कर्मयोग में बदल देता है	5
4.	योगी स्थिर प्रज्ञ होता है	8
5.	कर्म सन्यासी पुरुष ही अवतारी होते हैं	10
6.	मानसिक विकास से ही मोक्ष संभव	12
7.	गीता में योग	15
8.	आत्मा परमात्मा में विलय कैसे हो?	18
9.	आत्मा अनश्वर है	21
10.	मनुष्य जीवन में कर्म अनिवार्य	24
11.	आत्मा व शरीर को अलग नहीं किया जा सकता	27
12.	योग पर चल कर ही भवसागर से पार हुआ जा सकता है	30
13.	मन की शक्ति के लिए सत्य पर चलना आवश्यक	33
14.	संसार से भागना योग नहीं बल्कि अन्तर्मुखी होना योग है	35
15.	ज्ञान, कर्म व सन्यास के सुमेल से ही हम योग के मार्ग पर बढ़ सकते हैं	38
16.	संसार की माया का फालतू संग्रह मत करो	41
17.	ईश्वर के न्याय से कोई बच नहीं सकता	43

क्र.सं.	प्रवचन	पृष्ठ
18.	बिना भक्ति के भगवान के दर्शन असंभव	46
19.	शरीर रूपी खेत में से हमने मुक्ति की पैदावार करनी है	49
20.	हम स्वयं दुखों का आह्वान करते हैं	52
21.	प्रभु से जुड़ने हेतु स्वस्थ शरीर आवश्यक	55
22.	योग से हम आने वाले दुःखों को दूर कर सकते हैं	59
23.	जीवन को सुखमय बना सकते हैं आर्ष विद्या से	62
24.	गुरु ही शांत कर सकते हैं ज्ञान की जिज्ञासा	65
25.	योग का पुनरुद्धार किया योगेश्वर प्रभु रामलाल जी ने	68
26.	रोगों की रोकथाम होती है नेति से	71
27.	योग को सीखने के लिए जंगलों में जाने की कोई जरूरत नहीं	74
28.	बिना योग के भगवान व मुक्ति नहीं मिलती	77
29.	पाँचों शत्रुओं को स्वाध्याय से काबू किया जा सकता है	80
30.	योग ऐसा विज्ञान है जो रोगों की जड़ तक जाता है	83
31.	दस इन्द्रियों पर संयम रखने वाला ही भक्ति कर सकता है	86
32.	आत्मसात से ही ज्ञान का लाभ संभव	89

क्र.सं.	प्रवचन	पृष्ठ
33.	हमने जीवन के पाँचों कोषों का स्वरूप ही बदल दिया है	92
34.	शिष्य गुरु को अर्पित होना चाहिए	95
35.	ध्यान की अपेक्षा कर्मयोग करना ज़रूरी	97
36.	योग आदिकाल से है तथा सब युगों में लाभ पहुंचाता है	100
37.	मनुष्य के स्वभाव को धर्म की कसौटी पर परखा जा सकता है	103
38.	भयानक रोगों का सरल उपचार योग	106
39.	आसुरी सम्पत्ति वाले मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकते	108
40.	बच्चों का भविष्य बिगाड़ रहा है आज का समाज	111
41.	मुक्ति कर्म से नहीं कर्मयोग से सम्भव	113
42.	धर्म स्थापना के लिए भगवान बार-बार आते हैं	116
43.	सुखी रहने का मार्ग दिखाता है गुरु	119
44.	योग ही पूर्ण ज्ञान है	122
45.	शुद्ध मन व सबल शरीर ही सुखी जीवन का आधार है	125
46.	निराकार की अपेक्षा साकार की भक्ति आसान है	127
47.	लुप्त योग विद्या को पुनः जागृत किया प्रभु राम लाल ने	129
48.	त्याग, बलिदान व प्रतिशोध धर्म के लिए जरूरी हैं	132

क्र.सं.	प्रवचन	पृष्ठ
49.	योग ही हमें सही ढंग से जीने की कला बताता है	134
50.	सतोगुण, रजोगुण व तमोगुण ही आत्मा को शरीर में बांधकर रखते हैं	136
51.	अगर परम आयु तक जीवित रहना है तो योग के लिए समय निकालना ही होगा	139
52.	राम बाण का काम करती है योग में नेति	143
53.	नेति द्वारा रोगों का उपचार	145
54.	थाईराइड के बिगड़ने से युवाओं का विकास प्रभावित होता है	148
55.	ईश्वर प्रणिधान से शक्ति मिलती है	151
56.	योग द्वारा रोगों को आने से पहले रोका जा सकता है	154
57.	पुण्य कर्मों से मिलते हैं सतगुरु	157
58.	गुरु के बिना मन कभी भी एकाग्र नहीं हो सकता	159
59.	ईश्वर की शरण में जाने से ही मन को शांति मिलती है	162
60.	ईश्वर एक ज्योति है, जिसको गुरु द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है	165
61.	योगी गुरु ही मुक्ति दे सकता है	168

क्र.सं.	प्रवचन	पृष्ठ
62.	गुरु ईश्वर की सृष्टि को निखारता है	171
63.	भक्ति ही मोक्ष का मूल आधार है	174
64.	योग के पुनरुद्धार हेतु अवतार लिया प्रभु राम लाल ने	178
65.	योग करने वाला रोगों से मुक्त रहता है	181
66.	ईश्वर से डरने वाला कभी पाप नहीं करता	184
67.	ईश्वरीय ऊर्जा का नाम ही प्राण है	186
68.	गुरु समर्पित शिष्य को अपने रंग में रंग देता है	189
69.	जिज्ञासा ही ज्ञान की जननी है	192
70.	कर्मयोगी काम तो करता है मगर उसमें लिप्त नहीं होता	195
71.	भगवान के लिए कर्म करने वाले को मोक्ष मिलता है	197
72.	शरीर, मन व बुद्धि को प्रशिक्षित किए बिना मोक्ष की प्राप्ति असंभव	200
73.	कल्याण के लिए मन का निग्रह आवश्यक	203
74.	ईश्वर प्राप्ति के लिए मन, बुद्धि व इन्द्रियों का संयम आवश्यक	205
75.	ध्यान के लिए आयुभर अभ्यास करना पड़ता है	208
76.	मन की साधना दिन भर करनी पड़ती है	211
77.	योगी कर्मों से परखा जाता है	214

क्र.सं.	प्रवचन	पृष्ठ
78.	आसुरी स्वभाव वाले भगवान को नहीं मानते	217
79.	चिन्ताएं, विचार व मन का भटकना ही मानसिक रोग है	220
80.	संसार से बांध कर रखते हैं तीनों गुण	222
81.	धर्म पर विश्वास रखने वाले को कोई डगमगा नहीं सकता	225
82.	अगर हम धर्म को नष्ट करेंगे तो धर्म हमें नष्ट कर देगा	227
83.	संसार में शांति का एक मात्र उपाय योग है	230
84.	सामाजिक बुराईयों के निवारण में स्त्री की विशेष भूमिका	233

1. मोक्ष की प्रथम सीढ़ी विषाद

मनुष्य जन्म अति दुर्लभ है। अनेक जन्मों के पुण्य कर्मों के फलस्वरूप ही प्रभु कृपा से मानव जीवन की प्राप्ति होती है। मनुष्य जन्म का एक विशेष लक्ष्य होता है जीवन मुक्ति अर्थात् इस शरीर के जन्म-मरण से निर्वाण। सभी गुरु, सन्त एवं विद्वजन इस लक्ष्य का ज्ञान करवाते हैं तथा बार-बार इस के महत्व को समझाते हैं। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्री कृष्ण बतलाते हैं कि मोक्ष की प्रथम सीढ़ी है वैराग्य अथवा विषाद। मनुष्य मोक्ष के मार्ग पर तभी अग्रसर हो सकता है जब उसका संसार की विषय वस्तुओं से लगाव नहीं रहता। अर्थात् जब उस का संसारिक वस्तुओं से वास्तविक वैराग्य हो जाता है। वैराग्य के विषय में पतांजल योग दर्शन में कहा गया है कि संसार की किसी भी देखी या सुनी वस्तु से लगाव न रहे। परन्तु वस्तुओं से लगाव खत्म हो जाने पर भी सगे सम्बंधियों का लगाव बना रहता है। अर्जुन की भी आरंभिक दशा ऐसी ही थी। वह राज्य नहीं चाहता था, विजय नहीं चाहता था परन्तु उसका तर्क था कि. अपने सभी सम्बन्धियों को मार कर यदि यह सब कुछ मिल भी जाये तो उसका क्या लाभ। तब भगवान श्री कृष्ण उसे कर्त्तव्य पालन और राग में भेद समझाते हैं।

उसे समझाते हैं कि यह सगे सम्बन्धी हमें यहीं संसार में ही प्राप्त हुए हैं तथा यहीं तक ही इन का साथ है। परन्तु मनुष्य को तो अनेक जन्म लेने हैं। अतः उसे संसार के जीवों से भी लगाव खत्म करना होगा। जब संसार के जीवों से भी वैराग हो जाता है तो वैराग्य की अगली सीढ़ी आती है विषाद जब इन्सान संसार से निराश हो जाता है, उदासीन हो जाता है। वह सोचता है कि यह संसार क्या है? मैं यहां क्यों आया? यह तो दुःखों का घर है। इस अवस्था में संसार से निराश मन भटक जाता है तथा कई प्रकार के विपरीत तथा निराशाजनक विचार उस के मन में आते हैं। ऐसी स्थिति में आवश्यकता होती है एक गुरु की जो उसे अन्धकार से निकाल कर प्रकाश की ओर ले जाये। गुरु व ज्ञानवान पुरुष उसे बतलाते हैं कि संसार की नाशवान वस्तुओं से हट कर उत्तम पुरुष अर्थात् आत्मा की पहचान करो। संसार में आने के अपने लक्ष्य की ओर बढ़ो। यह जीवन बहुमूल्य है। समय भी सीमित है। इसी में रह कर ही हम जीवन मुक्ति का प्रयास कर सकते हैं। इस जीवन को आत्म हत्या कर के या मानसिक रोग लगा कर समाप्त न करो। परन्तु यह ज्ञान तभी प्राप्त हो सकता है यदि हम विषाद की स्थिति प्राप्त कर सकें।

* * *

2. आत्म ज्ञान से ही जीवन बनता है 'स्थिर-प्रज्ञ'

संसार की नश्वरता से निराश मन जब गुरु से ज्ञान प्राप्त करता है तो वह अन्तर्मुखी हो जाता है। अन्तर में उसे सत्य स्वरूप आत्मा का भास होता है। उसे ज्ञान होता है उस आत्मा का जो अनश्वर है, आदि काल से है, सब जीवों में एक सी है। उस आत्मा का कभी अन्त नहीं होता, उसे कोई काट नहीं सकता तथा आग उसे जला नहीं सकती। जब हमें आत्म रूप का आभास हो जाता है तो अन्तर में सुख की अनुभूति होती है तथा मन खिला-खिला सा रहता है। परन्तु इस आत्मा को तभी देख सकते हैं जब संसार की नश्वर वस्तुओं से मन हट जाता है तथा संसारिक जीवों से भी राग नहीं रहता। यह आत्मा अजर है, अमर है तथा जन्म-जन्म में हमारे साथ रहती है। जो मनुष्य इस स्थिति को प्राप्त कर लेता है वह सभी जीवों को एक समान देख पाता है। उसके सभी मित्र बन जाते हैं तथा जीव योग युक्त हो जाता है। इस अवस्था में जीव राग, भय, क्रोध आदि अविकारों से मुक्त हो जाता है तथा उसके लिए पूरा विश्व ही एक

कुटुम्ब के समान हो जाता है। वह सदा समान स्थिति में रहता है। दु:ख में घबराता नहीं तथा सुख में बहुत प्रफुल्लित नहीं होता। ऐसा मनुष्य प्रभु भजन व चिन्तन में अपना समय लगाता है। वह संसार के जीवों से नफरत नहीं करता बल्कि अपने कर्त्तव्य क्षेत्र में रहते हुए उनसे प्रेम पूर्वक व्यवहार करता है। वह संसार की वस्तुओं का प्रयोग करता है परन्तु उन में लिप्त नहीं होता। वह संसार में कमल के समान रहता है। हमें नित्य अभ्यास करते हुए वैराग्य से विषाद और विषाद से ज्ञान की ओर अग्रसर होने का यत्न करते रहना चाहिए।

❊ ❊ ❊

3. योगी कर्म को कर्मयोग में बदल देता है

'कर्म से बन्धन होत है, कर्म योग से नाहीं'

यही युक्ति है संसार से छूटने की। साधारण कर्म से मनुष्य संसार में बंधा रहता है तथा आवागमन के चक्र को प्राप्त होता है। परन्तु कर्मयोग से वह बन्धन में नहीं फंसता और मुक्ति को प्राप्त होता है। अब प्रश्न उठता है कि 'कर्म' और 'कर्म योग' में अन्तर क्या है? साधारण मनुष्य संसार में लिप्त हो कर कर्म करता है। वह किसी उद्देश्य को सामने रख कर, किसी स्वार्थ के लिए, किसी लाभ की खातिर एवं किसी फल की प्राप्ति के लिए कर्म करता है। परन्तु योगी वही साधारण व सामान्य कर्म इन किसी भी कारणों से नहीं करता। वह तो कर्म इस लिए करता है क्यों कि कर्म करना उसका कर्त्तव्य है व उसका धर्म है। वह कर्त्तव्य से आगे नहीं बढ़ता। वह मोह में नहीं पड़ता। वह संसार में लिप्त नहीं होता। वह संसार से विरक्त रह कर ईश्वर को स्मरण करते हुए कर्म करता

है। अर्थात् वह कर्म को कर्म योग में बदल देता है। भगवान कृष्ण ने गीता में कर्म योग को यज्ञ कहा है तथा यज्ञ उसको कहते हैं जहां भगवान स्मरण रहते हैं।

भगवान कृष्ण अर्जुन को आत्मा का ज्ञान देते हुए शिक्षा देते हैं कि सभी जीवों में एक ही आत्मा है जो ईश्वर का अंश है। उस का ध्यान करने से हम अन्तरात्मा से शुद्ध हो कर मोक्ष को प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए हे अर्जुन! तुम मेरा ध्यान करते हुए अपना कर्म करो। उठो और युद्ध करो क्योंकि यही तुम्हारा कर्त्तव्य है और इसी से ही तुम मुक्ति के मार्ग पर आगे बढ़ पाओगे। परन्तु अर्जुन फिर शंकित हो कर प्रश्न करता है कि हे केशव! जब जीव ध्यान व ज्ञान से मुक्त हो सकता है तो फिर कर्म की क्या आवश्यकता है? भगवान समझाते हैं कि जीव का कर्म करना स्वभाव भी है और धर्म भी। क्योंकि जीव कर्म क्षेत्र में रहता है। कर्म करना उसके लिए अनिवार्य है। वह न भी चाहे तो भी प्रकृति उस से कर्म करवा लेती है। उसे भूख लगेगी तो खाना खायेगा ही, प्यास लगेगी तो पानी पीयेगा ही। परन्तु कर्म का निष्पादन

शुद्ध रूप से करना होगा। मन से शुद्ध हो कर हमें शुभ कर्मों का अभ्यास करना होगा। परन्तु कर्म करते हुए सदा स्मरण रहे कि कर्म का फल भी हमें भोगना है। यदि हम कर्म में लिप्त हो कर कर्म करेंगे तो उस के फल को भी प्राप्त होंगे। अतः हम संसार से राग को त्याग कर प्रभु को याद रखते हुए कर्म करते रहें तभी हमारा कल्याण होगा। इसी को ही कर्म योग कहते हैं।

❋ ❋ ❋

4. योगी स्थिर प्रज्ञ होता है

गीता में भगवान कर्म योग का ज्ञान देते हैं। आम मनुष्य साधारण कर्म करते हैं क्योंकि वह संसार से मोह वश तथा किसी लाभ वश ही कर्म करते हैं। वे कर्म केवल अपने सगे सम्बंधियों या मित्रों की ही खातिर करते हैं या किसी से जब कोई लाभ की आशा हो तभी कर्म करते हैं। अन्यथा किसी सामान्य जीव के लिए या सामान्य परिस्थिति में वे कर्म नहीं करते। भाव यह है कि साधारण जीव संसार में लिप्त हो कर किसी विशेष स्वार्थ के लिए ही कर्म करते हैं। ऐसा कर्म सामान्य कर्म है तथा इस कर्म के साथ फल भी जुड़ा हुआ है। अच्छे व बुरे दोनो कर्मों का फल यथा युक्त प्राप्त होता है जो जीव को सदा जन्म मरण के चक्र में डाले रखता है। परन्तु योगी वही सभी कर्म भिन्न प्रकार से करता है। उस के लिए सारा संसार ही एक कुटुम्ब के समान है। वह किसी स्वार्थ या फल की इच्छा के लिए कर्म नहीं करता। वह तो कर्म इस लिए करता है कि कर्म करना उसका धर्म है उसका कर्त्तव्य है। उसे आत्मा का ज्ञान होता है कि सब जीवों में एक ही ईश्वर की आत्मा है

तथा वह प्रभु को सन्मुख रखते हुए उसे स्मरण करते हुए कर्म करता है। उसे कर्म के फल की इच्छा नहीं होती न ही वह भगवान से कुछ मांगता है। अर्थात् वह तो फल का भी त्याग कर देता है। उसे सुख मिले तो वह फूलता नहीं, दुख आये तो मुरझा नहीं जाता। वह सब परिस्थितियों में एक समान रहता है। ऐसी स्थिती को ही स्थिर प्रज्ञता कहते हैं जो योगियों की स्थिति होती है। ऐसी दशा में योगी देह मुक्त कहलाता है तथा इसे 'विदेह' अवस्था भी कहते हैं जो जनक आदि विद्वानों ने प्राप्त की थी। ऐसे जीवों का पुनः जन्म केवल योगियों के ही घर होता है। ऐसे योगियों को जन्म से ही सिद्धियां प्राप्त होती हैं। परन्तु यह अवस्था तभी प्राप्त हो सकती है जब हम ज्ञान-कर्म-सन्यास का निरन्तर अभ्यास करें। अर्थात् प्रभु को स्मरण करते हुए, फल की इच्छा को त्याग कर निस्वार्थ योग युक्त कर्म करें।

* * *

5. कर्म सन्यासी पुरुष ही अवतारी होते हैं

योगी कर्म के फल की इच्छा को तो दृढ़ अभ्यास उपरान्त त्याग देता है परन्तु फिर भी मन में यह रहता है कि यह कर्म मैंने किया। मुक्ति के मार्ग पर आगे बढ़ने के लिए हमें इस से भी आगे का अभ्यास करना है। हमें अपने शरीर और आत्मा को पृथक-पृथक करना होगा। जैसे ताना बाना अलग कर दिया जाये। योगी समझता है कि कर्म तो उसकी इन्द्रियां करती हैं न कि उसकी आत्मा। आत्मा तो पवित्र है तथा द्रष्टा बन कर सब खेल देखती रहती है। योगी समझता है कि देखती तो उसकी आंखें हैं, स्वाद तो उसकी जीभ चखती है, भूख तो उसके पेट को लगती है। वह स्वयं को आत्मा कह कर इन्द्रियों से अलग हो जाता है। वह कहता है कि मैं नहीं खा रहा मेरा शरीर खा रहा है। यानि कर्म योग की अगली सीढ़ी में जीव कर्म से भी छूट जाता है। कर्म से मुक्ति का अर्थ है प्रकृति से मुक्त हो जाना। इसे प्रकृतिलय अवस्था कहते हैं। इस अवस्था में जीव प्रकृति के बन्धन में नहीं रहता। वह तो स्वतंत्र हो कर कहीं भी

विचर सकता है। परन्तु इस स्थिति की प्राप्ति के लिए कड़ा अभ्यास चाहिए। जीव कर्म से मुक्त हो जाये तथा स्वयं को कर्त्ता न माने अपितु समझे कि मैं शुद्ध बुद्ध आत्मा हूँ। आत्मा तो निर्लेप है। न वह सूंघती है, न स्पर्श करती है, न सोती है न खाती है। इसे न आग जला सकती है, न वायु सुखा सकती है। जल इसे गीला नहीं कर सकता। आत्मा तो सदा निर्लेप रहती है। योगी आसक्ति को त्याग कर, सुख में रहता है। वह मन से कर्म को त्याग कर इन्द्रियों द्वारा कर्म करता रहता है। ऐसा योगी आत्मा का ज्ञान रखता है तथा सब जीवों को सम भाव से देखता है क्यों कि वह सब जीवों में ईश्वर को ही देखता है। सब के साथ सम व्यवहार करता है। ऐसे कर्म सन्यासी अवतारी पुरुष होते हैं। ऐसी स्थिति में कर्म-सन्यासी (इन्द्रियों से) सभी कर्म करते हुए भी (आत्मा से) कुछ नहीं कर रहे होते। ऐसे अवतारी पुरुषों को कभी कर्म का फल नहीं भोगना पड़ता।

* * *

6. मानसिक विकास से ही मोक्ष संभव

राजयोग हमारे मन का विकास करता है तथा मानसिक विकास के द्वारा ही मनुष्य मोक्ष को प्राप्त कर सकता है। गीता योग का एक महान ग्रंथ है। इसमें महर्षि व्यास ने मानसिक विकास का क्रम हमारे सामने रखा है। मानसिक विकास उस समय शुरू होता है जब मनुष्य को जीवन से ग्लानि पैदा हो जाती है। जब ग्लानि पैदा होती है तो मन को सच्ची चीज़ में लगाने की बात याद आती है। मन को आत्मा में लगाना दूसरा मानसिक विकास है। इसके बाद भगवान आत्म चिन्तन करने को कहते हैं। आत्म चिन्तन से बड़ा ज्ञान क्या हो सकता है। योगी देखता है कि वह कब तक चिन्तन करता रहेगा क्योंकि शरीर की जरूरतें बहिरमुखी होने के लिए विवश करती हैं। इसलिए वह संसार से ग्लानि को ध्यान में रखते हुए तथा आत्म चिन्तन करते हुए भी कर्म करता है। किसी विशेष उद्देश्य को सामने रख कर जब हम कर्म करते हैं तो ध्यान आत्मा से हट जाता है। इसीलिए भगवान कहते हैं कि निष्काम कर्म करो। जब कर्म करते हुये फल की

इच्छा न रहे तभी निष्काम कर्म होता है। इसे जीवन मुक्ति कहते हैं। हम कर्म करते हुए ज्ञान में डूबे रहते हैं। कर्म शरीर करता है, आत्मा नहीं। ऐसा करने वाला जीव जब संसार से जाता है तो उसे पुनः जन्म नहीं लेना पड़ता। परन्तु वह इच्छानुसार जन्म ले भी सकता है। शरीर, मन व बुद्धि को वश में करना जरूरी है। इसके बिना मानसिक विकास असंभव है। योगी विचार करता है कि जिस मन, शरीर को वह वश में कर रहा है वास्तव में वह क्या हैं? अगर आत्मा है तो शरीर भी है। आठ चीजों से बनी प्रकृति से संसार चल रहा है। इन तत्वों में जब आत्मा आती है तो सृष्टि बन जाती है अर्थात् ज्ञान के साथ विज्ञान भी जुड़ा हुआ है। इसे अलग नहीं किया जा सकता है। गीता के नवम् अध्याय को राजविद्या योग कहते हैं। यह सरलतम मार्ग है। इस पर ज्ञानी व अज्ञानी सब चल सकते हैं। यह पांच रास्तों वाला मार्ग है। हमें पता होना चाहिए कि भगवान सर्वव्यापक है। वह किसी एक जगह बंधा हुआ नहीं है। भगवान तो वायु व आकाश से भी सूक्ष्म है। हमें ऐसे भगवान को हर समय स्मरण करना चाहिए ताकि मानसिक विकास निरन्तर

होता रहे। भगवान कहते हैं कि सांसारिक बातें छोड़ मेरी बातें करो। हम दृढ़ निश्चय से भगवान की भक्ति करते रहें। यह तभी होगा जब मन दूसरी ओर नहीं जायेगा। हमें भगवान के साथ होने का आभास होना चाहिए। हमारी भक्ति निष्काम होनी चाहिए। साकाम भक्ति से लाभ नहीं होता। जो कामना से युक्त होकर वेदों के मंत्रों द्वारा तथा यज्ञों द्वारा प्रार्थना करते हैं वह स्वर्ग तो पा सकते हैं, दिव्य लोक भी जा सकते हैं लेकिन इन लोकों को भोग कर उन्हें पुनः जन्म लेना पड़ता है। इसलिए जो कुछ करो उसे भगवान के अर्पण करो। अपना कुछ मत रखो। यदि कोई दुराचारी भी इन नियमों पर चलने लग जाता है तो वह भी महात्मा बन जाता है।

* * *

7. गीता में योग

महर्षि व्यास ने गीता में श्री कृष्ण-अर्जुन का जो संवाद लिखा है वह योग का ही ग्रंथ है। उसे गीता (योग शास्त्र) कहा जाता है। गीता योग का पूर्ण मार्ग बताती है। अर्जुन लड़ना नहीं चाहता लेकिन फिर भी लड़ा। हम संसार में रहें लेकिन संसार से विरक्त बने रहें। इसे विषाद योग कहते हैं। फिर प्रश्न पैदा होता है कि जब मन संसार में न लगे तो फिर कहां लगे? संसार से विरक्त मन अपने भीतर आत्मा को देखे। संसार से विरक्त रहकर ईश्वर में मन लगा कर संसारिक कर्म करता रहे। भगवान कहते हैं कि तुम निष्काम कर्म करो। कर्म को फल से अलग कर दो अर्थात् कर्म को सन्यास में मोड़ दो। क्योंकि कर्म तो इन्द्रियां करती हैं। आत्मा कर्म नहीं करती। इसलिए हमारा कर्म से कुछ लेना देना नहीं है। यह बात हमारी समझ में आनी चाहिए। जब आत्मा में सोऽहम् के सिवाए कुछ नहीं रहता ऐसी स्थिति में योगी इस अवस्था में पहुंच जाता है कि वह इच्छा अनुसार

जन्म ले सकता है लेकिन इसमें समय लग सकता है। इसके बाद आत्म संयम योग आता है जिसमें इन्द्रियों को वश में करना होता है। गीता का छठा अध्याय इसी की शिक्षा देता है। हमने इन्द्रियों के साथ मन को एकाग्र करना है व बुद्धि को संयमित करना है। इसके लिए हमें कई जन्म लग सकते हैं। इसके बाद जिज्ञासा पैदा होती है कि आत्मा है तो शरीर व संसार कैसे बन गया? संसार स्वप्न नहीं है यह वास्तव में है। इसके लिए ज्ञान विज्ञान योग है। आठ तत्वों से संसार व शरीर बनता है। इसको इकट्ठा करने वाली आत्मा है। इसके बिना यह तत्व बिखर जाते हैं। सभी आत्माएं एक धागे में पिरोई हुई हैं। हमने उसी धागे को समझना है। उस धागे का नाम ब्रह्म है जो सब में व्याप्त है। उस ब्रह्म को जानना मुश्किल है। उसे केवल मर कर ही जाना जा सकता है। जो सर्व व्यापक है वही ब्रह्म है। हम उस परमात्मा को जानने का प्रयास करें जो प्राचीन ज्ञानी, प्राचीन कवि और सबसे पहला गुरु है। जो सारे विश्व का शासक है जिससे सूक्ष्म कोई नहीं है। वह आत्मा से भी सूक्ष्म है। हम ऐसे

परमात्मा के स्वरूप को याद करें जिस का बुद्धि चिंतन नहीं कर सकती। जो अंधकार से परे व प्रकाश स्वरूप है। उसके प्रति हमारी असीम श्रद्धा होनी चाहिए। ऐसे मनुष्य को परम गति प्राप्त होती है।

* * *

8. आत्मा परमात्मा में विलय कैसे हो?

महर्षि व्यास जैसा विद्वान न कभी पहले हुआ न कभी होगा। उन्होंने दुनिया का सबसे बड़ा ग्रंथ लिखा जिसमें एक लाख श्लोक हैं। उन्होंने अठारह पुराण लिखने के साथ-साथ वेदों के मंत्रों का संग्रह भी किया। ग्रंथ स्वयं भगवान लिखवाते हैं। हर ग्रंथ के पीछे उसका तात्पर्य होता है। महर्षि व्यास ने गीता एक उद्देश्य से रची। उन्होंने गीता के अठारह अध्याय लिख कर उसे योग शास्त्र का नाम दिया। हमें गीता पढ़ने से पहले यह पता होना चाहिए कि इसमें वह योग के बारे में क्या बताना चाहते हैं। जीवन का लक्ष्य मोक्ष है। जिसमें आत्मा का परमात्मा में विलय हो जाता है। गीता बतलाती है कि मोक्ष कैसे प्राप्त किया जा सकता है। जीवन, प्रकृति व संसार से मुक्ति संबंधी गीता में विस्तार से बताया गया है। गीता शुरू वैराग्य से होती है। गीता कहती है कि संसार से विरक्त हो कर अपनी आत्मा में अन्तर्मुखी हो जाओ। लेकिन इस अवस्था में भी हम कब तक बैठ सकते हैं। इसीलिए वह वैराग्य व ज्ञान के साथ-साथ

कर्म करने को कहती है लेकिन कर्म निष्काम होना चाहिए। दुनिया की कोई इच्छा नहीं होनी चाहिए। राजा जनक ऐसा ही कर्म करते थे। ऐसा व्यक्ति जब पुनः जन्म लेता है तो उसे योग करने की जरूरत नहीं पड़ती। उन्हें जन्म से ही समाधि सिद्ध होती है। कर्म का फल भगवान जरूर देते हैं, चाहे मांगो या न मांगो। इसलिए जन्म तो अवश्य होगा। इसलिए कर्म को आत्मा से पृथक कर दो अर्थात् कर्म को सन्यास में बदल दो। गीता कहती है कि तुम जो भी कर्म करते हो उससे आत्मा को अलग कर दो तभी कर्म सन्यास होता है। ऐसा व्यक्ति इच्छानुसार संसार में जन्म लेता है। हमने आत्मसंयम करते हुए मन, बुद्धि व आत्मा को वश में करना है तभी हम आगे बढ़ सकेंगे। विचार आता है कि संयम आत्मा का करना है या शरीर का। आत्मा परमात्मा का अंश है, यह बात समझ में आनी चाहिए। हमने आत्मा को ब्रह्म में लीन करना है। यह कार्य बहुत मुश्किल है। भगवान इसके लिए सरल मार्ग बताते हैं। वह कहते हैं कि जो भी करो दुनिया के दिखावे के लिए मत करो। ईश्वर को हर जगह देखो तो ही तुम्हारी मुक्ति हो सकती है। वह कहते हैं कि चींटी

से लेकर जड़ चेतन आदि में मैं विद्यमान हूँ। लेकिन ऐसा देखते-देखते तो बुद्धि भ्रमित हो सकती है। इसलिए मेरे वास्तविक रूप को देखें। लेकिन जब अर्जुन भगवान के असली रूप को देखने की जिद्द करता है तो भगवान उसे दिव्य चक्षु भी प्रदान करते हैं तो अर्जुन सारे संसार व हजारों सूर्यों को एक साथ भगवान के शरीर में चमकता देखता है। वह भयभीत हो जाता है तथा भगवान से पहले वाले रूप में आने का अनुरोध करता है। भगवान द्वारा दिव्य दृष्टि वापिस लिए जाने पर ही वह सामान्य हो पाता है। भगवान के दिव्य रूप को सहन करना सहज नहीं है। भगवान कहते हैं कि आप इस रूप को जान भी सकते हो और इसमें प्रवेश भी कर सकते हो। लेकिन यह केवल भक्ति द्वारा ही संभव है। भगवान कहते हैं कि अपने शरीर से मोक्ष को पैदा करो तथा मुझे जानने का प्रयास करो। अपने को मेरे जैसा बना लो तो मुक्ति मिल जायेगी। आत्मा-परमात्मा में कभी खराबी नहीं आती। यह अनादि है। भगवान कहते हैं कि मेरे में कोई दोष नहीं है। जबकि तुम दोषों से घिरे हुए हो। दोषों से निकल जाओगे तो तुम भी परमात्मा बन जाओगे।

* * *

9. आत्मा अनश्वर है

इंसान के सामने शरीर व मन की दो समस्याएं हैं। हम शरीर को ठीक व मन को वश में रखने का प्रयास करते हैं। जिसकी दोनों चीजें ठीक हैं वही योगी है। भगवान ने मन को स्थिर करने के लिए ध्यान व चिन्तन करने को कहा है। मन को टिकाने का यत्न करते हुए भी हम कई बार डोल जाते हैं। मन को एकाग्र करने के लिए अभ्यास व वैराग्य ज़रूरी है। गीता कहती है कि पहले वैराग्य करो फिर अभ्यास करो। इसके बिना मन नहीं टिक सकता। माया से मुंह मोड़ना व घर से मोह तोड़ना ही वैराग्य है। कुछ लोग ऐसे करते हुए घर से भाग जाते हैं जोकि ठीक नहीं है। घर संसार सब चीजें नाशवान हैं। इसलिए गीता कहती है कि जो शाश्वत है उससे जुड़ जाओ। हम अपनी आत्मा को देखें क्योंकि आत्मा ही ज्ञान है। आत्मा सदा से है यह कभी नहीं मरती। शरीर अगर समाप्त भी हो जाये तो भी आत्मा का कुछ नहीं बिगड़ता। वैराग्य ज्ञान के साथ-साथ कर्म भी जरूरी है। ऐसे कर्म करो कि वैराग्य बना रहे। कर्म के साथ उसका

फल भी जुड़ा है। इसलिए भगवान कहते हैं कि कर्म व उसके फल को अलग अलग कर दो। कर्म के फल का त्याग कर दो। कर्म करते समय संसार की कोई इच्छा नहीं होनी चाहिए। ऐसा करने वाले मनुष्य को जीवन मुक्त कहते हैं। इसके इलावा हम ऐसे कर्म करें कि हमारा पुनर्जन्म न हो। इसके लिए हमें कर्म को सन्यास में बदलना होगा। ऐसी अवस्था में हमारी ऐंसी भावना हो कि जो कर्म करते हैं वह हमारी आत्मा नहीं करती बल्कि हमारी इन्द्रियां करती हैं। अर्थात् आत्मा को कर्म से अलग कर दो। ऐसा व्यक्ति जब चाहेगा तभी संसार में आयेगा। ऐसी स्थिति में पहुंचने के लिए मन, शरीर व बुद्धि को संयमित करना होगा। हमें यह समझना होगा कि ईश्वर ज्ञान है व प्रकृति विज्ञान है तथा यह सारी सृष्टि आठ तत्वों से बनी है। हम ईश्वर को सर्वव्यापक समझ कर उसके प्रति श्रद्धा रखते हुए निष्काम भक्ति करें। भगवान कहते हैं कि तुम मुझे ऐसे देखो जैसे संसार में हर जगह वायु रहती है। ऐसा करने वाला सारे पापों से छूट जाता है। जो ज्ञानी लोग हैं वह ऐसा सोच कर ही मेरी पूजा करते हैं। उन्हें मैं ही ज्ञान प्रदान करता हूं। मैं

उनके अंदर का अज्ञान समाप्त कर देता हूं। भगवान कहते हैं कि यदि किसी वस्तु में विशेष तेज देखो तो वह तेज मेरा समझो। तुम मुझे हर जगह-देवताओं, मनुष्यों, पशुओं व जड़ पदार्थों में देख सकते हो। देवताओं में मैं यम, विष्णु व मरीचि हूं। मनुष्यों में सबसे ऊंचा ऋषि भृगु हूं, देवऋषियों में नारद, गंधर्वों में चित्ररथ, सिद्धों में कपिल मुनि, दैत्यों में प्रह्लाद, कालों में महाकाल, मुनियों में व्यास, शस्त्र धारियों में राम, पशुओं में इन्द्र का हाथी एरावत, जंगली जानवरों में शेर, जलचर में मगरमच्छ, पक्षियों में गरूड़, जड़ पदार्थों में बोहड़ वृक्ष, शस्त्रों में वज्र मैं ही हूं। तुम मुझे कहीं भी देख सकते हो।

* * *

10. मनुष्य जीवन में कर्म अनिवार्य

योग सब धर्मों का सार है। कोई धर्म ऐसा नहीं है जिसमें योग का कोई न कोई अंश न हो। जिस प्रकार मनुष्य को प्यास स्वाभाविक लगती है उसी प्रकार मनुष्य संसार में आकर यह सोचता है कि वह संसार में क्यों आया? यहां आने का उसका उद्देश्य क्या है? यह वृति बच्चों में भी आती है तथा मनुष्य को वैराग्य की ओर ले जाती है। इसमें मनुष्य संसार से निकलना चाहता है। इसी वृति को लेकर बड़े-बड़े शास्त्र लिखे गए। इन शास्त्रों का आरम्भ ही इस बात से होता है कि संसार में मनुष्य का मन नहीं लगता। उसकी जिज्ञासा रहती है कि उसे कुछ प्राप्त हो। उसकी जिज्ञासा का ईलाज गुरु के पास है। गुरु उसे आत्मा की ओर मोड़ता है। गीता के अठारह अध्याय जो एक दूसरे से जुड़े हुए हैं इस जिज्ञासा का समाधान बताते हैं। पहले अध्याय में अर्जुन लड़ना नहीं चाहता तथा उसे संसार से विषाद हो जाता है। अगले अध्याय में ज्ञान आरम्भ होता है जिसे सांख्य योग कहते हैं। इसमें भगवान अर्जुन को कहते हैं कि तुम अपने आप

को देखो कि तुम कौन हो। वास्तव में तुम आत्मा हो, अजर हो, अमर हो। आत्मा उसी तरह शरीर त्यागती है जैसे हम कपड़े बदलते हैं। भगवान विषाद को समाप्त करने के लिए अर्जुन को अन्तर्मुखी होने को कहते हैं। जब भगवान ने अर्जुन को आत्मा के बारे में समझा दिया तब अर्जुन कहता है कि भगवान अगर यह सब ठीक है तो मैं ध्यान लगा कर बैठ जाता हूं आप मुझे लड़ने को क्यों कहते हो। मुझे इस घोर कर्म लड़ाई की ओर क्यों लगाते हो। भगवान कृष्ण अर्जुन के इस जवाब से हैरान नहीं होते क्योंकि वह योगेश्वर हैं। वह अर्जुन को समझाते हैं कि कोई मनुष्य एक क्षण के लिए भी कर्म करने के बिना नहीं रह सकता। प्रकृति स्वयं कर्म करवाती है। आत्म स्थिति के होते हुए भी तुम्हें कर्म करना है। निहित कर्म तो करने ही पड़ते हैं। कर्म के त्याग से कर्म का करना बड़ा है। बिना कर्म करने के तो शरीर की यात्रा भी नहीं चलेगी। भगवान के इस उत्तर से कर्म योग शुरू होता है। गीता में कर्म योग का बहुत महत्व है। अब प्रश्न पैदा होता है कि कर्म कैसा किया जाए? भगवान कहते हैं कि योग में रह कर कर्म करो।

हाथों से काम परंतु मन में राम होना चाहिए। शरीर अपना कर्म करता रहे और मन प्रभु की ओर रहे। भगवान कहते हैं कि आसक्ति को छोड़ दो। जो चीज अपनी है उससे भी असक्ति न रखो। ऐसी स्थिति तब आती है जब मनुष्य मन की कामनाओं तथा इच्छाओं का त्याग कर देता है। तब वह अपनी आत्मा को देखता है। ऐसा मनुष्य ही योगी है। अगर हम आसक्ति को नहीं त्यागेंगे तो कर्मों के चक्कर में उलझे रहेंगे। तब हम जो भी कर्म करेंगे उसका फल जरूर मिलेगा।

* * *

11. आत्मा व शरीर को अलग नहीं किया जा सकता

योग हमें जीवन व परमार्थ सुधारने की कला सिखाता है। इसीलिए योग के अंदर शरीर के लिए हठयोग व आत्मा के लिए राजयोग है। आत्मा का संबंध मन के साथ है। मन ही बंधन में डालता है तथा यही मोक्ष दिलाता है। इसीलिए शास्त्रों में मन को काबू करने पर ज़ोर दिया जाता है। मन को काबू करने के लिए एक ध्यान की विधि बतलाई गई है। गीता में मन को एकाग्र करने की विस्तार पूर्वक विधि बताई गई है। मन को एकाग्र करने के लिए वैराग्य का होना जरूरी है। जब तक संसार से मोह रहेगा तब तक मन को आत्मा में लगाने में मुश्किल आएगी। आत्मा हमेशा रहती है। आत्मरूप को देखने के लिए हमें मन को अंदर की ओर मोड़ना होगा। वैराग्य तथा आत्मदर्शन के साथ-साथ कर्मयोग भी जरूरी है। वैराग्य, ज्ञान (आत्मदर्शन) तथा कर्म का निरंतर अभ्यास करके ही हम जीवन लक्ष्य तक पहुंच सकते हैं। परंतु कर्म के साथ तो फल बंधा हुआ है। इसलिए हमें कर्म को यज्ञ बनाना होगा अर्थात् फल

की इच्छा का त्याग करना होगा। जब हम ध्यान में बैठते हैं तो यह विचार आता है कि संसार क्या है? तथा शरीर क्या है? यह कैसे बने हैं? शरीर प्रकृति है तथा आत्मा पुरुष। ये अनादि काल से हैं। बिना प्रकृति के तो आत्मा भी नहीं रह सकती। आत्मा व शरीर को अलग नहीं किया जा सकता। शरीर आत्मा के रहने के लिए घर है। शरीर व आत्मा सदा से हैं। आत्मा एक शरीर से निकल कर दूसरे में चली जाती है। आत्मा से संबंधित जो चीजें हैं वही ज्ञान है। गीता में भगवान कहते हैं कि पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि व अहंकार आदि आठ प्रकार की प्रकृति है। भगवान कहते हैं कि मैं इनसे ही संसार रचता हूँ। यह बाहर की प्रकृति है। इसके आगे बड़ी प्रकृति है। इसमें एक जीव है जो इन आठों को इकट्ठा करता है। यही सारी सृष्टि का आधार है। उसके बाद एक परमात्मा है। भगवान कहते हैं कि मैं पैदा भी करता हूँ तथा मैं ही वापिस ले जाता हूँ। इन सब को कन्ट्रोल करने वाला मैं ही हूँ। मेरे से आगे कोई तत्व नहीं है। मैं इन सब में ही रहता हूँ। मैं सूक्ष्म से भी सूक्ष्म हूँ। जैसे एक धागे में मणियां परोई हुई हों। अगर मैं निकल

जाऊं तो यह सब कुछ बिखर जाएगा। सृष्टि में सब कुछ एक जैसा नहीं है। मैंने दुनिया को चलाने के लिए सात्विक, राजसिक व तामसिक तीन गुण बनाए हैं। लेकिन यह तीनों गुण मेरे में नहीं हैं। सारा संसार इन तीन गुणों के कारण ही व्याप्त है। लोग इन तीन गुणों से आगे नहीं निकल पाते । इसीलिए वह मुझे नहीं देख पाते। समाधि के अंदर योगी को सृष्टि का रहस्य समझ आता है।

❋ ❋ ❋

12. योग पर चल कर ही भवसागर से पार हुआ जा सकता है

हम भगवान से आशा करते हैं कि वह हमारे प्रत्येक कष्ट को हर लेंगे लेकिन योग इस भ्रांति में नहीं रहता कि आप चाहे जो मर्जी करते रहो, भगवान हर हाल में पार उतार देंगे। पार उतरने के लिए हमें भी कुछ करना होगा। यही योग व भगवान का नियम है। जीवन एक लम्बी यात्रा है। यह 84 का चक्र है। अगर मनुष्य सावधानी से इस यात्रा को करे तो वह 84 के चक्र को पार कर सकता है। मनुष्य में जितनी शक्ति व बुद्धि है उतनी किसी दूसरे जीव के पास नहीं है। ऋषि लोग कहते हैं कि इसी बुद्धि से मनुष्य एक जन्म में इस संसार से पार हो सकता है। जब हम किसी गाड़ी को यात्रा के लिए ले जाते हैं तो उस की पूरी जांच की जाती है कि कहीं उस में कोई गड़बड़ तो नहीं है। उसी प्रकार हमारा शरीर भी यात्रा कर रहा है। हमने अगर यात्रा पूरी करनी है तो इसके उपकरणों को कस कर रखना होगा। शास्त्र कहतें है कि अपने अंगों को स्वस्थ रखो, मगर हम इस ओर ध्यान नहीं देते। गीता जोकि योग का ग्रंथ है उसके

छठे अध्याय में आत्म संयम योग के बारे में बताया है। उस में 12 संयम लिखे हैं। अगर हम उनमें से दो-चार भी विचार करें तो लाभ हो सकता है। गीता जैसा दूसरा कोई ग्रंथ नहीं है। संयम शरीर, मन व बुद्धि से संबंध रखता है। संयम तभी होगा जब हमारे अंदर भक्ति होगी। भक्ति के विषय में गीता कहती है कि जो भक्ति करता है वह योगियों से भी श्रेष्ठ है। भक्ति के लिए नियमों का पालन करो। सभी लोग योग करते हैं पर जिनकी भगवान के प्रति श्रद्धा हो उसी के अंदर भगवान बैठते हैं। भगवान को श्रद्धा से मन में बिठाने से ही योग हो जाता है। यह बात जितनी कहनी आसान है, उतनी ही करनी मुश्किल है। भक्ति करने वाला एकांत में रह कर छिप कर भक्ति करता है। भगवान और भक्त का रिश्ता गुप्त रहता है। भक्ति के रहस्य को अपने तक सीमित रखना चाहिए। सतसंग से ज्ञान मिलता है, उपदेश मिलता है परन्तु भक्ति एक अलग चीज़ है। भगवान का भक्त से रहस्यमय नाता है। हमें बुद्धि को भी भगवान में लगाना चाहिए। बुद्धि मन को व मन इन्द्रियों को वश में करता है। इसीलिए बुद्धि को सारथी व मन को लगाम कहा

गया है। संकल्प से जो कामनाएं पैदा होती हैं उनको छोड़ दो। कामनाएं छोड़ देने पर भी कई बार इन्द्रियां नहीं मानती। हमें इन्द्रियों को भी काबू में रखना होगा तथा बुद्धि में धैर्य रखना होगा तभी भक्ति में कामयाबी मिलेगी। मन चंचल है, यह इधर-उधर भागता रहता है। जब यह भक्ति से भाग कर कहीं जाए तो इसे पुनः वापिस लाओ। इस प्रकार निरंतर अभ्यास द्वारा मन की वृत्तियों पर काबू पा कर ही हम जन्म मरण के चक्कर से छूट सकते हैं।

* * *

13. मन की शक्ति के लिए सत्य पर चलना आवश्यक

मनुष्य जीवन दो भागों में बंटा हुआ है। एक वर्तमान जीवन तथा दूसरा जो इस शरीर के बाद आएगा। शरीर इस जन्म के बाद काम नहीं आएगा। मन, बुद्धि तथा आत्मा अगले जन्म में भी साथ रहते हैं। अगला जीवन चलाने के लिए हमें मन की शक्ति चाहिए। अगर हमने 84 के चक्कर को समाप्त करना है तो मन को मजबूत करना होगा। मन को मजबूत करने के लिए हमें निरंतर कोशिश करनी चाहिए। अगर हम दूसरों का बुरा सोचते रहेंगे तो मन कमजोर हो जाएगा। बुरा सोचने वाला बुरा ही बोलेगा व बुरा ही कर्म करेगा। इसलिए हमें किसी का बुरा चिन्तन नहीं करना चाहिए। सारे शास्त्र कहते हैं कि मन से कभी किसी का बुरा न करो। मन तब कमजोर होता है जब हम सच्चाई पर नहीं चलते। लोग कहते हैं कि झूठ के पांव नहीं होते। झूठे आदमी में मन की शक्ति नहीं होती। अगर हम झूठा कर्म न करें तो मन में ताकत खुद आ जाएगी। चोरी करते समय हाथ कांप

जाते हैं, मन तो पहले ही कांप जाता है। आज लोग किसी प्रकार की चोरी करने से नहीं हिचकिचाते। हमें इस प्रवृति को बदलना होगा। हमारे अंदर संसार का जितना लालच आता है, उतना मन पर बोझ पड़ता है। जितना त्याग अधिक होगा उतना मन मजबूत होगा। इसलिए मन को माया से दूर रखो। हमें वासनाओं से बचना चाहिए क्योंकि यह भी मन को कमजोर करती हैं। हमें अपने मन को शुद्ध रखना होगा। यह एक सफेद चादर की तरह है। इस पर दाग लगने से बचना है। मन के रोगों को दूर करने का एक इलाज संतोष है। गीता में लिखा है कि भगवान ने जो दिया है उसके लिए उसका शुक्रिया करो। मांगो मत, अगर जरूरत होगी तो वह स्वयं दे देगा। जीवन भी तो उसी ने दिया है। मन को मजबूत करने के लिए हमें स्वाध्याय करना चाहिए। स्वाध्याय करने से मन के विकार स्वतः ही दूर हो जाते हैं।

* * *

14. संसार से भागना योग नहीं बल्कि अन्तर्मुखी होना योग है

योग वैराग्य से शुरू होकर मुक्ति पर समाप्त होता है। योग दर्शन और योग शास्त्र दोनों एक ही बात कहते हैं। पतंजलि ऋषि कहते हैं कि अभ्यास व वैराग्य से मन एकाग्र होता है जबकि गीता कहती है कि अभ्यास व वैराग्य से मन वश में होता है। शास्त्र व दर्शन में भेद होता है। शास्त्र में शिक्षा होती है जबकि दर्शन एक फिलौस्फी है। हिन्दू फिलौस्फी की छः सीढ़ियां हैं और उनमें से योग एक है। गीता बतलाती है कि योग कैसे करना है। वह कहती है कि संसार से भागना योग नहीं बल्कि अन्तर्मुखी होना योग है। प्रभु राम लाल जी गृहस्थियों के लिए योग लाए हैं। भगवान राम, भगवान कृष्ण व योग दर्शन के रचयिता पतंजलि ऋषि भी गृहस्थी थे। हमें संसार में रहते हुए निष्काम कर्म करना है। गीता कहती है कि अगर भगवान से मिलना चाहते हो तो स्वयं उस जैसे बनो। निष्काम भक्ति से ही हम ब्रह्म बन सकेंगे। लेकिन हमें यह पता होना चाहिए कि ब्रह्म क्या होता है। उसका कोई रूप नहीं होता जिसका

कि व्याख्यान किया जा सके। उसका न कोई आदि है न अन्त। उसी ब्रह्म के लिए हमने कोशिश करनी है। वह आदि पुरुष है उसको प्राप्त करना है। आत्मा को पुरुष व शरीर को प्रकृति कहते हैं। आत्मा अनश्वर है जबकि प्रकृति नश्वर है। ब्रह्म इन दोनों से परे है। इसीलिए संसार के हर शास्त्रों में भगवान का नाम पुरुषोत्तम अर्थात् सबसे उत्तम पुरुष रखा है। गीता कहती है कि उसके स्वरूप का अगर वर्णन करना है तो भगवान के अनुसार संसार में सूर्य, चांद व अग्नि में जो प्रकाश है वह उनसे ही आया है। संसार में जो रोशनी है वह भगवान से ही है। इसको कौन देख सकता है व कैसे देख सकता है। इस संबंध में भगवान कहते हैं कि संसार में दो तरह के पुरुष होते हैं एक वह जो यत्न करते हैं मगर साधना नहीं करते। दूसरे वह जो साधना भी करते हैं। जो साधना करते हैं वह अपने भीतर मुझे देख सकते हैं क्योंकि साधना द्वारा ही मुझे देखा जा सकता है। उसको प्राप्त करने के लिए सुख और दुख के द्वन्द्व से मुक्त होना होगा। योगी पुरुष ही इस तक पहुंच पाते हैं। भगवान कहते हैं कि मैं सब के हृदय में बैठा हूँ। मेरे से ही ज्ञान

बना है व मेरे से ही संशय की निवृत्ति होती है। स्मरण शक्ति भी मैं हूँ, वेदों को बताने वाला भी मैं हूँ। यह बड़ा गूढ़ रहस्य है। इस ज्ञान से ज्यादा गुप्त चीज़ कोई नहीं है। जो इस रहस्य को समझ लेता है वह मुक्ति को प्राप्त कर लेता है।

❋ ❋ ❋

15. ज्ञान, कर्म व सन्यास के सुमेल से ही हम योग के मार्ग पर बढ़ सकते हैं

प्रभु रामलाल जी संसार में सनातन धर्म के उत्थान के लिए उस समय आए जब यह परतन्त्रता में जकड़ा हुआ था। तब उन्होंने हमें योग का मंत्र दिया क्योंकि योग द्वारा ही शरीर व मन को सबल बनाया जा सकता है। राजयोग से मन एकाग्र व शांत होता है जबकि हठयोग शरीर को निरोग रखता है। मन बड़ा चंचल है यह वश में नहीं आता। मन को एकाग्र करने के लिए हमारे पास व्यास जी द्वारा बताया मार्ग है। व्यास द्वारा लिखी गीता एक विलक्षण ग्रंथ है। व्यास जैसा न संसार में हुआ, न होगा। गीता के विषय में स्वामी विवेकानन्द ने कहा है कि गीता जैसा ग्रंथ न कभी लिखा गया, न लिखा जायेगा। गीता में बताया गया है कि हमने योग कैसे करना है। हर एक अध्याय का अलग-अलग नाम है। एक अध्याय दूसरे से संबंधित है। संसार गीता पढ़ता तो है लेकिन वह यौगिक दृष्टि से गीता का पाठ नहीं करता। इसमें एक-एक अध्याय का अभ्यास करना पड़ता है। पहला अध्याय

बताता है कि हमें किसी से असक्ति नहीं होनी चाहिए। दूसरा अध्याय बताता है कि संसार में सब कुछ नाशवान है। जो नाशवान नहीं है अर्थात अपने भीतर की आत्मा से मोह करो। इसीलिए पहले अध्याय को विषादयोग व दूसरे को ज्ञानयोग कहा गया है। तीसरा अध्याय बताता है कि हमने कर्म भी करना है। इसीलिए उसे कर्मयोग कहते हैं। हमने आत्म स्थिति में रह कर कर्म करना है। गीता के चौथे अध्याय का नाम ज्ञान कर्म सन्यास योग है। सन्यास का भी अभ्यास करना पड़ता है। गीता के अनुसार सन्यास के बिना ज्ञान व कर्म भी बेकार हो जाते हैं। लेकिन केवल भगवे कपड़े पहनने से कोई सन्यासी नहीं बन जाता । ज्ञान, कर्म व सन्यास के सुमेल से ही हम योग के मार्ग पर बढ़ सकते हैं। वैराग्य इसकी प्रथम सीढ़ी है। लेकिन इसका अभ्यास करना पड़ता है। एक बार व्यास ने अपने बेटे को ज्ञान देकर इस अभ्यास के लिए राजा जनक के पास भेजा। जब वह राजा जनक के पास पहुंचा तो जनक ने उसके हाथ में तेल से भरा एक कटोरा देकर आज्ञा दी कि वह पूरा शहर घूम आए। परंतु साथ ही दरबारियों के हाथ तलवार देकर कहा कि

वे इसके पीछे-पीछे चलें और यदि इसके कटोरे से तेल गिरे तो वे इसे मार दें। जब व्यास का बेटा शहर घूम कर आया तो राजा जनक ने पूछा कि उसने शहर में क्या-क्या देखा? इस पर व्यास के बेटे ने कहा कि महाराज मैंने तो कुछ नहीं देखा, मैं तो केवल तेल ही देखता रहा। क्योंकि मेरा लक्ष्य इसको गिरने से बचाना था। अर्थात् जो कर्म हम करते हैं उसमें इच्छा, विचार व संकल्प नहीं होने चाहिएं, तभी ज्ञान हमारे काम आयेगा। ऐसा करने से कर्म ज्ञान की अग्नि में भस्म हो जायेगा। ऐसी स्थिति वाला ही वास्तविक योगी है। वह काम करते हुए भी कुछ नहीं कर रहा होता। उसकी कोई इच्छा नहीं होती। उसका मन काबू में होता है। ऐसा मनुष्य शरीर से कर्म तो करता है लेकिन कर्म करते हुए भी उसका जन्म-मरण नहीं होता। ऐसे व्यक्ति का कर्म यज्ञ होता है।

❋ ❋ ❋

16. संसार की माया का फालतू संग्रह मत करो

धर्म पर चलना ही गुरु की शिक्षा है। यह कार्य मुश्किल है, परन्तु जो व्यक्ति धर्म पर नहीं चलता वह अपने जीवन को संकट में डाल लेता है तथा संसार के लिए दु:ख का कारण बन जाता है। गीता में कहा गया है कि जो मनुष्य धर्म पर न चल कर कामनओं में फंसा रहता है, वह कभी शांति से नहीं रह पाता। भगवान राम ने भी कहा है कि मर्यादा में रहो। अगर हम अपनी मर्यादा को त्याग देंगे तो कहीं के नहीं रहेंगे। समुद्र हर समय पानी से भरा रहता है, उसमें पानी आता रहता है, नदियाँ निरंतर गिरती रहती हैं, करोड़ों वर्षों से यह चला आ रहा है परन्तु समुद्र हमेशा अपनी सीमा में रहा है। आज समुद्र ने अपनी मर्यादा का उल्लंघन किया, बांध तोड़ दिए, तो संसार को तबाही के रास्ते धकेल दिया। इंसान की मर्यादा उसका धर्म है। अगर हम धर्म को छोड़ देंगे तो संसार के लिए दु:ख का कारण बन जाएंगे। समुद्र हमें शिक्षा दे रहा है। पर हम शिक्षा ग्रहण नहीं कर रहे। कामनाएं, इच्छाएं नदियों की तरह हमारे में प्रवेश कर

रही हैं, वह हमारे अंदर उथल पुथल पैदा करती हैं। जितना हम संसार की माया का संग्रह करेंगे हमारा मन उतना ही अशांत हो जाएगा क्योंकि यह माया हमारे अंदर प्रदूषण पैदा कर देगी। इस मन को योग द्वारा शुद्ध रखेंगे तो शांति मिल जाएगी। इसके लिए अष्टांग योग में अपरिग्रह का पालन करने की शिक्षा दी गई है। संसार में रहते हुए केवल उतनी ही वस्तुएं रखो जो जीवन यापन के लिए आवश्यक हैं। जीवन सुखी हो जाएगा। दूसरों की वस्तु देख कर मन को कभी मत डोलने दो और न ही बिना जरूरत के उस वस्तु की चाह करो। इसे ही अपरिग्रह कहते हैं और योगी को इसका दृढ़ता से पालन करना चाहिए।

* * *

17. ईश्वर के न्याय से कोई बच नहीं सकता

आज समाज में भक्ति का बहुत प्रचार है परन्तु ईश्वर को सच्चे हृदय से कम लोग ही मानते हैं। ईश्वर को मानने का वास्तविक भाव ईश्वर से डरना व उसके न्याय को समझ कर बुरे काम न करना है। जो मनुष्य ऐसा करता है वास्तव में वही ईश्वर को मानता है। जो ऐसा नहीं करते वह चाहे कितनी भी भक्ति करें उन्हें आस्तिक नहीं कहा जा सकता। आस्तिक हमेशा ईश्वर को अपने समक्ष देखता है व पाप करने से डरता है। ईश्वर से डरना व पाप से डरना एक ही बात है। जो मनुष्य पाप से नहीं डरते, वह ईश्वर की सत्ता को चुनौती देते हैं। यदि वे ईश्वर की भक्ति व धर्म के कर्म करते भी हैं तो उन कर्मों का उद्देश्य भक्ति नहीं बल्कि कोई स्वार्थ एवं प्रशंसा प्राप्त करना होता है। हमें ईश्वर को इस रूप में मानना चाहिए कि वह हमें धर्म के मार्ग पर चलने की प्रेरणा दें और हम बुरे कर्मों से बचें। ईश्वर को मानने वाला मनुष्य कभी पाप नहीं करता क्योंकि वह ईश्वर के

न्याय पर विश्वास रखता है। इसके विपरीत मूर्ख व नास्तिक लोग ईश्वर के न्याय को न जानते हुए पाप करते हैं। ईश्वर के न्याय में एक विशेषता है कि जब उसका फल मिलता है तो मनुष्य को उसके कारण का पता नहीं होता क्योंकि वह समय आने पर मिलता है। इसलिए वह इस भ्रांति में रह कर पाप करता है कि भविष्य किसने देखा है। लेकिन वह यह नहीं जानता कि ईश्वर के घर में देर है अंधेर नहीं। यह ईश्वर की माया है कि वह पापी को तुरन्त फल नहीं देता। परन्तु ज्ञानी इस बात को समझता है कि जो उसने पाप किया है वह ईश्वर व धर्मराज की किताब में अवश्य लिखा जाता है और उसका फल भी अवश्य मिलेगा। अगर आज के समाज को पापों से बचाना है तो ईश्वर भक्ति का सच्चा स्वरूप प्रचारित करना होगा। हम समाज के न्याय से बच सकते हैं लेकिन ईश्वर के न्याय से नहीं बच सकते। इस बात को समझने की जरूरत है कि पाप के दो फल मिलते हैं। एक समाज से तो दूसरा ईश्वर से। अगर हम समाज के न्याय से बच भी गए तो ईश्वर का न्याय हमें अपराध का फल आवश्य देगा। हमें इस बात का ध्यान

रहना चाहिए कि जो दुख हम आज पा रहे हैं उसका कारण हमें नहीं पता लेकिन ईश्वर को पता है। ईश्वर के न्याय में एक विशेषता है कि वह सजा तो देता है परन्तु कारण नहीं बतलाता। गुरुजन हमें कारण समझाने का यत्न करते हैं परन्तु अज्ञानता वश वह हमारी बुद्धि में नहीं बैठता। हमें चाहिए कि हम ईश्वर को हाज़िर-नाज़िर समझें व पाप से डरें।

❊ ❊ ❊

18. बिना भक्ति के भगवान के दर्शन असंभव

हम सब भगवान के दर्शन करना चाहते हैं लेकिन बिना अपने आप को भगवान के अर्पण किए इसकी प्राप्ति असंभव है। भगवान जिस पर कृपा करते हैं वही उनके दर्शन कर सकता है। योग के मार्ग पर चल कर ही हम सच्ची भक्ति के मार्ग पर अग्रसर हो सकते हैं। भगवान श्री कृष्ण गीता में कहते हैं कि यदि मेरे दर्शन करने हों तो मेरी विभूतियों के दर्शन करो। संसार में जो कुछ विशेष दर्शनीय या शक्तिशाली अथवा किसी विशिष्ट गुण वाला है, उसमें यह गुण मेरी शक्ति से ही है। उसमें मेरे स्वरूप को देखा जा सकता है। अर्जुन जिज्ञासा प्रकट करता है कि मैं आप को विभूतियों में नहीं बल्कि आप के वास्तविक रूप में देखना चाहता हूँ। इस पर भगवान कहते हैं कि मेरे उस स्वरूप को तुम इन आंखों से नहीं देख सकोगे। अगर तुम जिद्द करते हो तो मैं तुम्हें दिव्य चक्षु प्रदान करता हूँ। उस द्वारा तुम मेरे रूप के दर्शन कर सकोगे। इस पर अर्जुन की बाहरी आंखें बंद हो गईं और उसकी भीतर की आंखें खुल गईं। श्री कृष्ण के स्वरूप

का संजय गीता में इस प्रकार वर्णन करता है कि यदि आकाश में हजारों सूर्य एक साथ उदय हो जाएं तो उनका जो प्रकाश होगा ऐसा प्रकाश श्री कृष्ण के दिव्य स्वरूप में था। उस स्वरूप में एक ही स्थान पर समस्त जगत था जो अलग-अलग रूपों में विभाजित था। लेकिन इस दिव्य स्वरूप के बारे में अर्जुन कहता है कि भगवन! आपके इस विशेष रूप का न कोई अंत है, न कोई मध्य तथा न ही कोई आदि। तुम्हारी ओर मेरी दृष्टि जमती नहीं है। मैं तुम्हें पूर्ण रूप से प्रज्जविलत देख रहा हूँ। अग्नि व सूर्य की रोशनी जो आप में है उसकी कहीं भी तुलना नहीं हो सकती। पृथ्वी व आकाश के मध्य जितना स्थान है वह तुम्हारे स्वरूप से ही भरा हुआ है। मैं चारों दिशाओं में तुम्हें ही देख रहा हूँ। अर्जुन कहता है कि आप के स्वरूप को देख कर मेरी आत्मा घबरा गई है। मुझे न धैर्य हो रहा है न शान्ति मिल रही है। मुझे यह भी नहीं पता कि मैं किस दिशा में बैठा हूँ। आप मुझ पर कृपा करें कि मैं स्वस्थ हो जाऊं। मुझ से जो भूल हुई है मैं उसके लिए क्षमा मांगता हूँ। मैं आपकी महिमा को नहीं जानता था। इसीलिए मैंने कई बार आप

को मित्र सम्बोधित किया, कई बार यादव कहा तो कई बार कृष्ण नाम से पुकारा। आप तो सर्वजगत के स्वामी हैं। देवताओं के आदि देव हैं, मुझे वह अपना पहला रूप ही दिखला दें। जब भगवान ने अर्जुन की दिव्य दृष्टि का संहार किया तो अर्जुन प्रसन्न होकर कहता है कि आप का यह रूप देखकर मैं सचेत हो गया हूँ व पहली अवस्था में आ गया हूँ। इस पश्चात् कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देते हुए कहा कि अर्जुन मेरे इस स्वरूप को कोई देख नहीं सकता परन्तु अनन्य भक्त को मैं इसका बोध करवा देता हूँ। अपना स्वरूप दिखला देता हूँ। वह मुझ में प्रवेश भी कर सकता है जिससे उसकी मुक्ति हो। परन्तु इसके लिए अनन्य भक्ति की आवश्यकता है।

❋ ❋ ❋

19. शरीर रूपी खेत में से हमने मुक्ति की पैदावार करनी है

गीता को योग की दृष्टि से पढ़ना चाहिए। गीता योग का ही ग्रन्थ है जिसमें भगवान कृष्ण ने मोक्ष प्राप्ति के कई मार्ग बतलाए हैं। क्षेत्र व क्षेत्रज्ञ को जो लोग जान लेते हैं वह संसार से मुक्त हो जाते हैं। क्षेत्र हमारा शरीर है। इस शरीर रूपी क्षेत्र में से हमने मुक्ति की पैदावार करनी है। यह शरीर हमें मुक्ति के लिए ही मिला है। क्षेत्रज्ञ परमात्मा है जो सब क्षेत्रों (शरीरों) में विद्यमान है। अगर हमने मोक्ष प्राप्त करना है तो हमें क्षेत्र (शरीर) के स्वाभाव, इसमें आने वाली तबदीलियों तथा इसके प्रभावों के बारे में पता होना चाहिए। क्षेत्र में पांच महाभूतों पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु व आकाश के अतिरिक्त एक अहंकार, एक मन व पांच इन्द्रियां तथा उनके पांच गुण भी हैं। इच्छा, द्वेष, सुख-दुख आदि भी शरीर के साथ लगे हुए हैं। हमने मोक्ष प्राप्ति के लिए साधना करनी है। इसके लिए पहले इस क्षेत्र को साफ करना होगा। इसमें कुछ गुण पैदा करने होंगे। हमारे भीतर अभिमान, हिंसा

आदि न आएं तथा सादगी व क्षमा की भावना के गुण हमारे भीतर बने रहें। गुरु के पास बैठ कर हम ज्ञान प्राप्त करें। दृढ़ता, शुद्धता व अपने पर पूर्ण संयम रखें तथा इन्द्रियों को काबू में रखें व वैराग्य का पालन करें। जन्म-मरण, बुढ़ापा, बीमारी आदि शरीर में आवश्यक तौर पर आते हैं। इनका मुकाबला करने के लिए हमें अपने को तैयार करना चाहिए। संसार में सदा रहने को कोई नहीं आता। इसलिए हमारी परिवार से इतनी आसक्ति न हो कि हम इसमें ही उलझ कर रह जाएं। हमें हमेशा समचित्त रहना चाहिए। सुख-दुख में हमारा चित्त एक जैसा रहे व परमात्मा की अनन्य भक्ति करें। जब भी देखें अपने परमात्मा को देखें। बहुसंगत में रूझने की बजाए एकांत को प्राथमिकता दें तभी भक्ति हो सकेगी। क्षेत्रज्ञ वह है जिसके पास हमने जाना है। हमें उसके गुण अपने सामने रखने चाहिएं। वह अनादि है, निर्गुण है। वह कभी नहीं जन्मता। अगर वह कभी शरीर में आ भी जाए तो वह शरीर में आकर कोई काम नहीं करता न ही वह संसार से लिप्त होता है। जिस प्रकार आकाश सब जगह

है उसी प्रकार परमात्मा भी सब जगह है। उस पर कोई भी चीज असर नहीं करती। इसी प्रकार आत्मा जो शरीर में है उस पर भी किसी चीज़ का असर नहीं होता। जिस प्रकार एक सूर्य सारे संसार में रोशनी फैला रहा है उसी तरह आत्मा शरीर में रहते हुए सारे शरीर को प्रकाशमय: करती है। आत्मा परमात्मा का ही अंश है। जो इस बात को समझ लेता है वह मुक्त हो जाता है।

20. हम स्वयं दुखों का आह्वान करते हैं

भक्ति करने से हमारा मन शान्त रहता है और ध्यान करने से ज्ञान की प्राप्ति होती है। यह सब बातें योग की व्यावहारिक विद्या से मिलती हैं। आज की दुनिया में कोई दुख नहीं चाहता हर कोई सुख की कामना करता है। लेकिन हम स्वयं दुखों का आह्वान करते हैं क्योंकि हम समय रहते योग नहीं करते। शरीर व मन हमसे कुछ नहीं मांगते। वे तो केवल इतना चाहते हैं कि उनकी सही संभाल कर उन्हें स्वास्थ्य रखा जाए। लेकिन आज हम कुछ करने की बजाय सुनने को अधिक प्राथमिकता देते हैं। लोग टी.वी. चैनलों पर अथवा समाचार पत्रों में या योग आश्रमों में योग के साधनों की जानकारी तो प्राप्त करते हैं लेकिन उसे करने में संकोच करते हैं, अतः वह इन साधनों का लाभ नहीं उठा पाते। जिस व्यक्ति ने गीता रची वह दुनिया का सबसे बड़ा विद्वान था। उसने 18 पुराण व महाभारत लिखा। महर्षि व्यास कितने

विद्वान थे इसका अंदाज़ा इन महान ग्रंथों से लगाया जा सकता है। महर्षि व्यास ने गीता को योग शास्त्र कहा है। हर अध्याय के अंत में उसका यौगिक नाम दिया गया है। गुरु शिष्य को सामने बिठा कर जो पाठ देते हैं, उसे उपनिषद कहा जाता है। इस लिए गीता में बार-बार उपनिषद का वर्णन आता है क्योंकि इसमें भगवान कृष्ण अर्जुन को अठारह विषयों का ज्ञान देते हैं। एक विषय दूसरे विषय का आधार बनता है। गीता का लक्ष्य मोक्ष है तथा इसके अठारह अध्याय हमें मोक्ष तक जाने का मार्ग बतलाते हैं। गीता में भगवान कहते हैं कि मैं सब के भीतर हूँ मुझे इधर-उधर तलाशने की बजाय अपने भीतर देखो। ईश्वर के योग्य बनने के लिए हमें तीन गुणों से ऊपर उठना होगा। जो योगी निरन्तर अपने अंदर अपनी आत्मा को देखते हैं वह उसे प्राप्त कर लेते हैं। किन्तु जो योगी नहीं बने, जिन्होंने साधना नहीं कि वह इसे प्राप्त नहीं कर सकते। भगवान को प्राप्त करने के लिए सुख और दुख के द्वन्द्व से मुक्त होना होगा। योगी पुरुष ही इस तक पहुंच पाते हैं। भगवान कहते हैं कि मैं सब के हृदय

में बैठा हूँ। मेरे से ही ज्ञान बना है व मेरे से ही संशय की निवृति होती है। स्मरण शक्ति भी मैं हूँ, वेदों को बताने वाला भी मैं हूँ। यह बड़ा गूढ़ रहस्य है। जो इस रहस्य को समझ लेता है वह मुक्ति को प्राप्त कर लेता है।

❋ ❋ ❋

21. प्रभु से जुड़ने हेतु स्वस्थ शरीर आवश्यक

सुख जीवन से व भक्ति आत्मा से संबंधित है। दोनों का समिश्रण हम में है इसीलिए शरीर को देह व आत्मा को देही कहा जाता है। अगर हमने आत्मा का कल्याण करना है तो हमें उसी ईश्वर के बनना होगा जिसके हम हैं। भगवान सचिदानंद हैं, मुक्त हैं। अगर हमने मुक्त होना है तो उन जैसा बनना होगा। आत्मा को प्रभु के साथ जोड़ना ही भक्ति है। हम ईश्वर को श्रद्धापूर्वक याद करते हैं, उनका स्मरण करते हैं, यही मोक्ष का सही रास्ता है। इसी से ही हम दु:खों से बचे रहेंगे। हमें जो शरीर मिला है उसे शुद्ध रखना है। हमारे शरीर के जो अंग-प्रत्यंग हैं, हमने उन्हें स्वस्थ रखना है। योग में बताया गया है कि हम किस प्रकार साधनों द्वारा इन्हें स्वस्थ रख सकते हैं। अगर हम इन साधनों का अभ्यास करें तो हमें दु:ख नहीं आएगा। अगर हम जन्म से ही भक्ति शुरू कर दें तो हमें एक जन्म में ही मोक्ष मिल

जाएगा। प्रभु राम लाल जी ने जो हठ योग बताया है उस द्वारा देह को निरोग रख कर हम उनकी कृपा प्राप्त कर सकते हैं। इसमें षटकर्म, आसन, मुद्रा, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान व समाधि आदि आते हैं। षटकर्म शरीर को स्वस्थ रखने के लिए हैं। इसमें नेति, धौति, नौली, बस्ति, त्राटक व कपालभाति आदि आते हैं। अगर हम सीखकर इन्हें करना आरम्भ कर दें तो रोग पास भी नहीं भटकेंगे। नेति कन्धे के ऊपर के रोगों को ठीक करती है। कन्धों के नीचे व पेट के ऊपर के रोगों के लिए धौति है। पेट के नीचे के रोगों के लिए नौली है तथा बस्ति है। सिर के ऊपर के अंगों की शक्ति बढ़ाने के लिए कपालभाति व त्राटक हैं। इससे आंखों की दृष्टि तक ठीक हो जाती है। दिमाग की नाड़ियां कमजोर हो जाने, आंखों में सरकूलेशन कम होने, आंखों के अंदर आसपास की नाड़ियों में मल रूक जाने आदि से आंखें कमजोर हो जाती हैं। इसके लिए योग में नेति, त्राटक व कपालभाति बताई गई हैं। नाक व आंख का परस्पर संबंध है। इनमें बारीक सुराख होते है जो खुले रहते हैं। आंखों का मल

नाक के रास्ते बाहर निकलता है। अगर यह रास्ता बंद हो जाए तो आंखों का पानी आंखों के ऊपर ही बहने लग जाता है। आंखों का मल मोतियाबिंद तक पैदा कर देता है। उस रास्ते को खोलने के तीन तरीके हैं। पहला नाक को हमेशा खुला रखो, नाक खुला रहेगा तो आंखों के छिद्र भी खुले रहेंगे। इसके लिए हमें नेति करनी चाहिए। कपालभाति किसी चीज़ को पम्प करने के समान है। इससे नालियों को साफ किया जा सकता है। इसके लिए आसान तरीका है कि हम एक नाक को बंद करके दूसरे नाक से ज़ोर-ज़ोर से वायु अंदर बाहर खींचें। इससे नाक खुल जाएगा। ज्यों-ज्यों हमारी उम्र बढ़ती है, आंखें कमजोर हो जाती हैं क्योंकि यह रास्ता बंद होता जाता है। इसके लिए हम मुंह में पानी भर नाक से निकालते हैं। इसमें से कुछ पानी आंखों में भी जाता है। इससे आंखों का मल पूरी तरह से निकल जाता है। आंखों के लिए सूत्र नेति भी लाभदायक है। इससे दिमाग की नाड़ियों में चेतनता आती है। अगर सिर चकराने लगे या दर्द करने लगे तो पादहस्त आसन करने से सरकूलेशन

ठीक हो जाता है। इस हेतु शीर्षासन व सर्वांगासन भी किया जा सकता है। परन्तु इसे किसी शिक्षक की उपस्थिति में ही करना चाहिए क्योंकि इससे कई बार रक्तचाप भी बढ़ जाता है। त्राटक आंखों की नाड़ियों के लिए है इससे नाड़ियों का शोधन होता है। त्राटक में एक बिन्दु पर निरंतर देखने से आंखों का मल धुल जाता है। शरीर के अंगों को शुद्ध रख कर हम प्रभु के साथ जुड़ सकते हैं।

❋ ❋ ❋

22. योग से हम आने वाले दुःखों को दूर कर सकते हैं

नाम सिमरन व योग द्वारा ही हम संसारिक व पारलौकिक सुख प्राप्त कर सकते हैं। संसार में कामयाब जीवन व्यतीत करने के लिए दोनों अपने-अपने स्थान पर जरूरी हैं। दुख और सुख दो विपरीत शब्द हैं लेकिन हम हमेशा सुख की प्राप्ति चाहते हैं। महापुरुषों ने हमें सुख की प्राप्ति हेतु कई साधन बताए हैं। परन्तु ज्ञान व विज्ञान का मार्ग केवल प्रभु राम लाल जी ने ही बताया है। योग से बड़ा कोई विज्ञान नहीं है। इस द्वारा हम आने वाले दुखों को दूर कर सकते हैं। व्यक्ति को आमतौर पर दो प्रकार के दुख सताते हैं। प्रथम प्रकार का दुख प्रारब्ध का है। कोई अमीर घर में व कोई गरीब घर में पैदा होता है। कोई अमीर के घर पैदा होने पर भी सुखी नहीं है तो कोई गरीब के घर पैदा होने पर भी सुखी है। गुरु बताते हैं कि तुम्हें जो प्रारब्ध आया है, वह तुम्हारे पूर्व कर्मों का परिणाम है, इन्हें टाला नहीं जा सकता। गुरु अपनी कृपा से ही सहनशक्ति देते हैं जिससे हम उस दुख को सहन करते हैं। सच्चा गुरु यह नहीं कहता कि मैं तुम्हारे प्रारब्ध

को बदल दूंगा अथवा तुम्हारी मौत का समय टाल दूंगा। गुरु प्रारब्ध को दूर नहीं करते बल्कि उसे सहन करने की शक्ति ज्ञान द्वारा देते हैं। जिससे हमारा दुख कम महसूस होता है। लेकिन जब हम प्रारब्ध दुखों को दूर करने का प्रयास करते हैं तो कई बार यह दुख बढ़ जाता है। ज्ञानी आदमी दुख को धैर्य पूर्वक सहन करते हैं। प्रारब्ध हमें बताता है कि हमने पूर्व में कुछ बुरे कर्म किए जिस कारण हमें यह दुख आया है। दूसरे प्रकार का दुख वह है जो हम वर्तमान में जानबूझ कर बुरे कर्मों द्वारा पैदा करते हैं। यह काम हमारी इन्द्रियां करवाती हैं। हमारी स्वाद इन्द्री सबसे अहम भूमिका निभाती है। शास्त्र कहते हैं कि संसार में बहुत सी बिमारियां हमारे आहार के कारण हैं। योगी लोग आने वाले दुखों को, आहार को संयमित करके दूर कर देते हैं। सात्विक आहार ही काम आता है। गीता में भगवान ने यही लिखा है। परन्तु हम गीता को मनन में नहीं लाते। आज सात्विक आहार की अवहेलना के कारण अनेकों बिमारियां आ रही हैं। तामसिक आहार के बाद हम तामसिक दवाईयों का सेवन करते हैं। हम आग को आग से बूझाने का प्रयास करते

हैं। हम योग के अनुसार अगर सात्विक आहार करें तो स्वस्थ रह सकते हैं। शरीर के साथ कष्ट आते रहते हैं। उसका उपचार योग में है। सात्विक के साथ-साथ हमारा आहार नियमित व संतुलित भी होना चाहिए। हठयोग की अवहेलना भी दुख का एक अहम कारण है। जो हठयोग को अपना रहे हैं वह सुखी हैं तथा अवहेलना करने वाले दुखी हैं। हठयोग में शरीर की शुद्धि के लिए षटकर्म हैं लेकिन जब तक हम इन्हें नहीं करेंगे तब तक लाभ प्राप्त नहीं होगा।

23. जीवन को सुखमय बना सकते हैं आर्ष विद्या से

योग लाखों वर्ष पहले की ऋषियों की खोज है। उनकी इस खोज में एक महानता है कि यह सब देशों, कालों व सदियों के लिए सुखदायक है। योग आज के विज्ञान की तरह नहीं है, जो ऊपर से सुखदायक है लेकिन इस सुख के अंदर नाश भी छिपा हुआ है जिस प्रकार सांप ऊपर से अच्छा लगता है लेकिन उसके अंदर विष छिपा होता है। लेकिन ऋषियों का योग जब तक संसार में रहेगा कल्याण करता रहेगा। योग में ऋषियों की जीवन शैली झलकती है। भगवान संसार में योग इसलिए लाए ताकि हम दुखों से मुक्त रहें। लेकिन आज हम योग प्राप्त करने के अधिकारी नहीं बन पाये हैं। प्रभु जी इस संसार की माया के स्वामी हैं, लेकिन हम माया के दास बन गए हैं। हम माया के लिए धर्म को बेच रहे हैं, देश में धर्म लुप्त होता जा रहा है। धर्म अहिंसा व सत्य पर खड़ा होता है मगर आज के संसार में यह दोनों चीजें टूट रही हैं। राम ने धर्म के लिए राज्य छोड़ दिया परन्तु आज लोग अपने लाभ के लिए अत्याचार करने व झूठ बोलने

से पीछे नहीं हटते। हमें ऋषियों की तरह जीवन व्यतीत करना चाहिए। ऋषियों ने देखा कि हमें यह शरीर मिला है उसे किस प्रकार ठीक रखना है क्योंकि धर्म के लिए शरीर का होना बहुत जरूरी है। शरीर को स्वस्थ्य रखने के लिए उन्होंने हठयोग बनाया। हठयोग सबसे बड़ा विज्ञान है। जो बिमारियां दवाईयों से ठीक नहीं होती वह योग के साधनों से ठीक हो जाती हैं। योग के साधन अमृत समान हैं। हमने इनसे लाभ उठाना है। शरीर को शास्त्रों में अनमय कोष कहा गया है। इसे हमने सात्विक अन्न द्वारा पुष्ट करना है ताकि यह दीर्घायु रहे। लेकिन हमने गलत खान पान द्वारा इस कोष को रोगमय कोष बना दिया है। अत: यह शरीर आयुपर्यन्त अनेकों रोगों से घिरा रहता है। इसके अतिरिक्त हमने मनमय कोष को भी बिगाड़ दिया है। मन में बातें व भाव चलते रहते हैं। अगर भाव गलत होंगे तो मन दुखी हो जाएगा। गीता में लिखा है कि अगर सब प्रकार के दुखों को दूर करना है तो मन को स्वच्छ रखो। ध्यान द्वारा मन स्थिर होता है। अर्थात् हमें ईश्वर का स्मरण व चिन्तन करना चाहिए। लेकिन हम चिन्तन की बजाय संसार की चिन्ता करते रहते हैं। मन पर जन्म जन्मांतर के संस्कार हैं। हमने

मनमय कोष को चिन्तामय कोष बना दिया है। शरीर के रोग गिने जा सकते हैं परन्तु मन के नहीं। शरीर के लिए योग के साधन हैं तो मन के लिए प्रभु का ध्यान बताया गया है। मन के आगे बुद्धि है जिसे विज्ञानमय कोष कहते हैं। हमारी बुद्धि तो खाली है लेकिन इसमें पारिवारिक समस्याएं व व्यापारिक समस्याएं भरी पड़ी हैं। विज्ञानमय कोष से इन चीजों को निकाल कर ऋषियों के ज्ञान को भरना होगा। ऋषियों द्वारा लिखे ग्रंथों में ज्ञान भरा पड़ा है, मगर हम उन्हें पढ़ते नहीं। हम इस योग्य नहीं बन पाते कि वह हमारी समझ में आएं। हमने विज्ञानमय कोष को भ्रममय कोष बना लिया है। ऋषि कहते हैं कि परिश्रम करो सफल हो जायोगे। हमारा भ्रम कहता है कि अंगुली में नग डाल लो पास हो जायोगे। आज संसार भ्रम के जाल में फंसा पड़ा है। इसके बाद आत्मा है। जिसे आनन्दमयकोष कहते हैं। इस तक पहुंचने के लिए ऊपरी तीनों कोषों का ठीक होना जरूरी है। इस कोष में प्रकाश ही प्रकाश है। लेकिन आज यह कोष भी अंधकारमय कोष बन कर रह गया है। यदि हम ऋषियों की विद्या को मनन में लायें तो जीवन सुखमय हो सकता है।

* * *

24. गुरु ही शांत कर सकते हैं ज्ञान की जिज्ञासा

गुरु एक महान व्यक्तित्व है जिसकी तुलना किसी अन्य से नहीं की जा सकती। मनुष्य को अपनी उन्नति व कल्याण के लिए माता-पिता व गुरु की आवश्यकता होती है। अगर किसी अन्य चीज़ की ज़रूरत हो तो वह अपने आप आ जाती है। यही बातें हमारे वेदों में बतलाई गई हैं। माता-पिता बच्चे को केवल जन्म ही नहीं देते बल्कि शक्ल के साथ-साथ उसे अक्ल भी देते हैं। अगर माता-पिता स्वयं सन्मार्ग पर चलते होंगे तभी वह बच्चे को उस मार्ग पर चला सकेंगे। भोजन के साथ-साथ बच्चा माता-पिता से कर्म भी ग्रहण करता है। इसलिए माता-पिता का जीवन आदर्श होना चाहिए। लेकिन आज कई माता-पिता स्वयं तो अच्छे मार्ग पर लगे हैं परन्तु वह अपने बच्चे को उस मार्ग पर नहीं लगाते। माता-पिता स्वयं तो सतसंग में आते हैं मगर बच्चों को साथ लाने की बजाए उन्हें घर छोड़ आते हैं। बच्चे को माता-पिता से ही ज्ञान मिलता है। जब बच्चा बड़ा होता है तो उसकी कई चीजों के प्रति जिज्ञासा पैदा होती है। उसकी

जिज्ञासा को माता-पिता से अधिक गुरु शांत कर सकता है अर्थात् उसे गुरु की ज़रूरत पड़ती है। जो जितना बड़ा जिज्ञासु होगा, वह उतना ही बड़ा ज्ञानी होगा। एक जिज्ञासु को बांधकर रखना बड़ा ही मुश्किल है। जिज्ञासु जिज्ञासा शांत होने तक आराम से नहीं बैठता। गुरु के पास जाने से उसकी सब प्रकार की जिज्ञासाएं शांत होती हैं। शिष्य को चाहिए कि वह गुरु के पास जाए, उसकी सेवा करे व अपनी जिज्ञासा शांत करे। प्रभु राम लाल जी ने भी गुरु की प्राप्ति हेतु कई कष्ट झेले। कई वर्ष की खोज के बाद उन्हें कैलाश पर्वत पर महाप्रभु जी के दर्शन हुए। वहां रह कर ही उन्होंने अपनी जिज्ञासा शांत की। गुरु शिष्य को जो ज्ञान देता है, वह शिष्य पर असर करता है। हमारे वेदों में ज्ञान भरा पड़ा है लेकिन हम उन्हें पढ़ते नहीं। गुरु ऐसा ज्ञान देता है जिसे प्राप्त करके शिष्य का मोह रूपी अज्ञान समाप्त हो जाता है। मोह के दूर होने के बाद उसे ईश्वर के दर्शन हो जाते हैं। शिष्य ऐसी अवस्था में पहुंच जाता है कि वह ईश्वर को जान भी सकता है, उस जैसा बन सकता है व उसमें समा भी सकता है। ऐसा होने से ईश्वर की शक्तियां स्वतः ही

उसमें आ जाती हैं। वह सृष्टि को पैदा भी कर सकता है व उसका नाश भी कर सकता है। योगी के पास ईश्वरीय शक्तियाँ होती हैं। प्रभु जी महाप्रभु से ऐसी सिद्धियाँ लेकर आए जिसके परिणाम स्वरूप आज पूरे संसार में योग का प्रचार हो रहा है। वह साकार भी हैं और निराकार भी, वह अपने रूप को दूसरे रूप में भी बदल सकते हैं। गुरु के पास जाकर शिष्य भी गुरु बन जाता है परन्तु गुरु योगी होना चाहिए।

❋ ❋ ❋

25. योग का पुनरुद्धार किया योगेश्वर प्रभु रामलाल जी ने

योग ही संसार को सही मार्ग दिखा सकता है। इस समान कोई रास्ता नहीं है। प्रभु राम लाल जी कलियुग को बदलने आए हैं। जब अधर्म का घोर अंधकार होता है अवतार पुरुष संसार में आकर धर्म को पुनः स्थापित करते हैं। प्रभु रामलाल जी जब संसार में आए तब लोग गुलामी में जकड़े हुए थे। उस समय विश्व के लगभग सभी देशों पर अंग्रजों का शासन था। वह लोगों को यही कहते थे कि हम सर्वश्रेष्ठ हैं। परन्तु प्रभु जी ने आकर यह संदेश दिया कि योग द्वारा ही गुलामी से मुक्ति पाई जा सकती है। योग आज का नहीं यह सतयुग से चला आ रहा है। गीता में भगवान कहते हैं कि सतयुग में मैंने महाराज विवस्तवान को योग सिखाया था। विवस्तवान से ही सूर्य वंश चला जिसमें आगे जा कर भगवान राम पैदा हुए। विवस्तवान ने यह योग महाराज मनु को दिया। मनु ने इसे इक्ष्वाकु को दिया व धीरे-धीरे यह आगे बढ़ता

गया। भगवान गीता में अर्जुन को कहते हैं कि मैं यही योग तुम्हें दे रहा हूँ, इसे संभाल कर रखना। लेकिन द्वापर के बाद योग लुप्त हो गया। उसी लुप्त योग को पुनः हमें देने के लिए भगवान अवतार लेकर आए हैं। योग कभी नष्ट नहीं होता। जबकि धर्म का स्वरूप कई बार समय के अनुसार बदलता रहा है। मगर योग का स्वरूप नहीं बदला। लेकिन आज योग की बजाए आसुरी चीजों का ज्यादा प्रचार हो रहा है। मास व मदिरा आसुरी चीज़ें हैं जबकि योग दैवी चीज है और अंत में इसकी ही विजय निश्चित है। हमें आसुरी ताकतों के समक्ष आत्मसम्पर्ण नहीं करना चाहिए। असुर कहीं बाहर से नहीं आते, वह हम में से ही पैदा होते हैं। योग मोक्ष के लिए है। अगर हमने मोक्ष को प्राप्त करना है तो उसके लिए कुछ गुणों को अपने अंदर धारण करना होगा। अगर हम योग करना चाहते हैं तो हमें एकांत वृत्ति का होना चाहिए। यह ठीक है कि हम समाज में रहते हैं मगर हमें एकांत पसन्द होना चाहिए। इसके अतिरिक्त हमें लघु आहार लेना चाहिए क्योंकि लघु आहार वाला कम बीमार होता है।

हमें अपने मन व जुबान पर काबू रखना चाहिए व अपना ध्यान हर समय प्रभु में लगाना चाहिए। मनुष्य में वैरागी वृत्ति होनी चाहिए ताकि उसे अपने शरीर व संसार की अपेक्षा भगवान अच्छे लगें। हमें काम, क्रोध, मोह, लोभ व अहंकार को छोड़ शांत रह कर ब्रह्म में रहना चाहिए। अगर हम योग के सही मार्ग पर नहीं चलेंगे तो योग को पुनः लुप्त होते देर नहीं लगेगी।

26. रोगों की रोकथाम होती है नेति से

हम पांच सौ वर्षों तक गुलाम रहे, जिस दौरान हम पर कई अत्याचार हुए व हमारे धर्म स्थानों को तोड़ा गया। लोग दिल्ली के बादशाह को ही ईश्वर समझने लगे। ऐसी स्थिति में प्रभु राम लाल जी संसार के लिए योग लाए ताकि लोग अपनी पुरातन संस्कृति व शास्त्रों को याद रखें। प्रभु राम लाल जी योग की तलाश में महाप्रभु जी के पास पहुंचे। वहां से योग विद्या ग्रहण कर हमारे लिए लाए ताकि हम सुखी रहें। उन्होंने योग की जो नदी शुरू की थी वह आज समुद्र बन चुकी है। उन्होंने हमें जो हठयोग दिया वह एक महान विज्ञान है जो हमारे जीवन के एक एक पहलु से लेकर हमें मोक्ष तक पहुंचाता है। यह सृष्टि से लेकर अंत तक हर एक मानव के लिए है। आज का विज्ञान कुछ लोगों तक ही सीमित है, इससे कितने लोग लाभ उठा रहे हैं? हठयोग का विज्ञान सदा सब के सुख के लिए है जबकि दूसरे

विज्ञान के बारे में यह दावा नहीं किया जा सकता है। हीरोशिमा विज्ञान के कारण ही थर्रा उठा था। हठयोग का विज्ञान जीवन की कला बताता है। प्रभु राम लाल जी ने शरीर के प्रत्येक अंग को स्वस्थ रखने की कला बताई। नाक शरीर का एक छोटा सा अंग है। नाक सामाजिक दृष्टि से भी बहुत महत्व रखता है। नाक के आगे भगवान ने एक छलनी लगा दी ताकि धूल आदि अंदर न जा सके। अगर कोई गंदगी अंदर चली जाए तो नाक उसी समय रोगी हो जाता है। इससे नाक की झिल्ली बढ़ जाती है, जुकाम लग जाता है, जो एक अलार्म है कि शरीर को सम्भालो, नहीं तो इसे कोई रोग लग जाएगा। नाक को शुद्ध करने के लिए प्रभु जी ने हमें नेति का उपयोग सिखाया। नेति शरीर के लिए महत्वपूर्ण है। नेति से प्रतिदिन नाक साफ करो। नाक के अंदर बलगम से पैदा हुए कीड़े रक्त में अपने घोंसले बना लेते हैं। एक बैक्टीरिया रातों-रात हजारों बैक्टीरिया पैदा कर लेता है। यह बैक्टीरिया कई अन्य भागों में फैल जाता है। वह आंखों, कानों, गले आदि पर प्रहार करता है। जब

बैक्टीरिया थाईराइड पर कब्जा कर लेते हैं तो उससे रस निकलना बंद हो जाता है। यह धीरे-धीरे श्वासनलि व पेट में जाते हैं। फिर फेफड़ों में चले जाते हैं, जिससे दमा बन जाता है। दमे का इलाज केवल योग में है। इसके लिए सुत्रनेति, वस्त्र धौती, जल नेति, वमन, सर्पासन, बद्धपद्मासन, स्कंधचालन, धनुरासन व सर्वांग आसन करना चाहिए। इससे श्वास क्रिया भी ठीक रहेगी व शरीर के अंदर की सफाई भी निरंतर होती रहेगी। इस द्वारा हम असंख्य रोगों से बच जाएंगे। अर्थात् शरीर में अनेक रोग नाक में उत्पन्न हुई गंदगी से पैदा होते हैं जो शरीर के समस्त भागों में फैल जाती है। प्रभु रामलाल जी ने नाक की गंदगी को साफ करने के लिए हमें नेति का विज्ञान दिया। नेति द्वारा नाक की सफाई करके हम बाकी रोगों से बच सकते हैं।

❋ ❋ ❋

27. योग को सीखने के लिए जंगलों में जाने की कोई जरूरत नहीं

भगवान जब भी संसार में आते हैं, वह कोई न कोई नया संदेश लाते हैं। भगवान राम राक्षसों को संसार से मिटाने का संदेश लाए थे तो भगवान कृष्ण ने कर्मयोग का संदेश दिया। प्रभु राम लाल जी सम्पूर्ण योग लेकर आये हैं। उन्होंने हमें योग का वह संदेश दिया जिसकी हमें अत्याधिक जरूरत थी। भारत 700 वर्षों तक गुलाम रहा। ऐसे समय में योग का नामोनिशान भी नहीं था। लेकिन आजादी के 50 वर्षों के बाद आज संसार के कोने-कोने में योग पहुंच चुका है। यह भगवान की कृपा से ही सम्भव हुआ है। लेकिन दुख की बात यह है कि आज भी लोग गुलामी की भाषा को सीखने व बोलने में गर्व महसूस करते हैं। गुलामी के काल में योग की न केवल अवहेलना की जाती थी, बल्कि योग की बात करने वाले का उपहास उड़ाया जाता था। गुलामी के काल में हमें अंग्रेजों ने शराब के नशे की ओर धकेल

दिया। उनसे पहले शराब का भारत में नामोनिशान नहीं था। लेकिन आज जब कि अंग्रेज चले गए हैं, अभी भी हम उनकी अंग्रेजी शराब के गुलाम बने हुए हैं। आज हम अंग्रेजी शराब पीने व अंग्रेजी भाषा बोलने में गर्व महसूस करते हैं। शराब का सेवन हमारी शान बन कर रह गया है। ऐसे काल में प्रभु रामलाल जी हमारे लिए योग लेकर आए। उन्होंने हमें निरोग रहने की विधि बतलाई। जिस समय वह योग का संदेश लेकर आए उस समय योग संसार से लगभग लुप्त हो चुका था। योग को जानने वाले साधु-महात्मा भी जंगलों में ही योग किया करते थे। आम आदमी योग से अपरिचित था। उन्होंने लोगों को बताया कि योग को सीखने के लिए जंगलों में जाने की कोई जरूरत नहीं है। इसे गृहस्थ में रह कर ही किया जाना चाहिए। आज स्थान-स्थान पर योग सिखाया जाता है। प्रभु रामलाल जी ने आदिनाथ भगवान शंकर से योग की विद्या प्राप्त की। भगवान शंकर ने उन्हें जंगलों में योगाभ्यास करने की अपेक्षा बस्ति में जाकर योग का प्रचार करने का आदेश दिया क्योंकि लोग रोगों से

पीड़ित थे। प्रभु रामलाल ने लोगों में रहकर उन्हें योग सिखाया। उन्होंने गृहस्थ में रहकर योग करने को महत्व दिया तथा इस विद्या को जन-जन तक पहुंचाने का संदेश दिया। यह उनकी महान कृपा से ही सम्भव हुआ है। विदेशों में योग के प्रति लोगों का लगाव बढ़ रहा है। आज ऋषि-मुनियों का योग समूचे विश्व में फैल गया है जिससे लोगों को अत्याधिक लाभ हो रहा है।

❋ ❋ ❋

28. बिना योग के भगवान व मुक्ति नहीं मिलती

योग का उद्देश्य मुक्ति है। लेकिन हम इस उद्देश्य को भूल चुके हैं इसीलिए हमारा जीवन दुःखों से भरा है। शास्त्रों में कहा है कि जीवन में धर्म, अर्थ व काम करते हुए हमने मुक्ति प्राप्त करनी है। बिना योग के भगवान नहीं मिल सकते तथा न ही कोई मुक्त हो सकता है। प्रभु रामलाल जी ने हमारे सामने योग के तीन उद्देश्य रखे। हमें जो शरीर मिला है वह स्वस्थ रहना चाहिए क्योंकि इसके बिना उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो सकती। इसके लिए उन्होंने हमें योग के कई साधन दिए क्योंकि बिना स्वस्थ शरीर के मोक्ष की बात करना भी अनुचित है। हमारा मन दृढ़ होना चाहिए। कमजोर मन वाले का शरीर चाहे कितना भी मजबूत क्यों न हो वह ढीला पड़ ही जाता है। इसके अतिरिक्त हमारी बुद्धि भी स्थिर होनी चाहिए। इन तीनों उद्देश्यों का परस्पर संबंध है। हम शरीर के लिए तो साधन करते हैं लेकिन मन को दृढ़ रखने के लिए कुछ नहीं करते। हमने अपने शास्त्रों को अलमारी में बन्द कर रखा है व उससे लाभ नहीं उठा रहे हैं।

हमारे लिए महापुरुष भी आज मात्र तस्वीर बनकर रह गए हैं। अगर उनकी आवाज हमारे कानों में पड़े तो हमारी यह दुर्दशा ना हो। हमारे पास आज राम कृष्ण की तस्वीरें हैं लेकिन राम कृष्ण नहीं। मनुष्य थोड़े समय बाद सबको भूल जाता है। कोई भी चीज तपस्या से दृढ़ होती है। लेकिन तपस्या का हमने गलत अर्थ निकाल लिया है। तपस्या का एक उद्देश्य हो जिसकी पूर्ति होनी चाहिए। आज लोग पंच अग्नि तप करते हैं लेकिन इससे क्या लाभ होगा। उल्टा शरीर बिगड़ जायेगा। गीता में मानसिक विकास हेतु हमें पांच चीजों को अभ्यास में लाने को कहा गया है। हमें अपने मन को स्वच्छ, खुश व शांत रखना चाहिए। यह हमारे वश में होना चाहिए। लेकिन आज हम मन के वश में रहते हैं। घोड़ा सवार के वश में होना चाहिए न कि घोड़ा सवार को लेकर भाग जाए। मन को वश में रखने के लिए वृत्तियों का निरोध करो। मन जहाँ भागे उसे वापस लाओ। यह काम मुश्किल तो है लेकिन तपस्या मुश्किल ही होती है। मुक्ति तो हमें मन ने ही देनी है। इसलिए हमारी भावना भी शुभ होनी चाहिए। मन में शुद्ध विचार आने चाहिए।

मन को एक जगह टिकाना चाहिए। इसके लिए जरूरी है कि हमारा एक इष्ट हो। अनेक इष्ट होंगे तो मन कैसे शान्त होगा। मन तब कमजोर होता है जब हम तिथि, वार आदि के भ्रम में पड़ जाते हैं। भगवान ने कोई दिन, वार व महीना अपवित्र नहीं बनाया है। मन को कमजोर करने वाली चीजें जादू टोना आदि बहुत हैं। इसके अनेकों रूप हैं। हमारा मन इसमें फंस जाता है व इष्ट से दूर भाग जाता है। हमें इससे बचना चाहिए। हमारी धर्म पर निष्ठा होनी चाहिए तभी हमारा मन दृढ़ होगा।

❊ ❊ ❊

29. पाँचों शत्रुओं को स्वाध्याय से काबू किया जा सकता है

शरीर के रोगों की तरह समाज में भी कई प्रकार के रोग होते हैं। जिस समाज में रोग होते हैं वह समाज दु:खी होता है। प्रभु राम लाल जी ने योग द्वारा सब बिमारियों का उपचार बताया है। उन्होंने शारीरिक व मानसिक बिमारियों के लिए हठयोग व राजयोग दिया है, बुद्धि के लिए स्वाध्याय दिया ताकि उसमें शांति रहे। यह सब चीजें आपस में संबंधित हैं। समाजिक बिमारी हमारे शरीर, मन व बुद्धि को भी लग सकती है। इससे कईयों को हृदय रोग तक लग जाते हैं तो कईयों की बुद्धि काम नहीं करती। अगर हमने सुखी होना है तो सम्पूर्ण योग करना होगा। रोग के निदान के लिए कड़वी दवाई खानी ही पड़ती है। जितनी भी बिमारियां हैं उनका प्रभाव हमारी आत्मा पर भी पड़ता है। हमारे मन के अंदर पांच शत्रु काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार हैं। यह हर समय अपना काम करते रहते हैं, यह हमें चैन से नहीं रहने देते। इन्हें स्वाध्याय से काबू किया जा सकता है। स्वाध्याय में ईश्वर के भजन से रस आता है। स्वाध्याय करते करते

हम संसार को भूल जाते हैं। स्वाध्याय बैठकर, लेटकर, किसी भी समय व कहीं भी किया जा सकता है। जब हम स्वाध्याय करते हैं तो हमारा भगवान से मेल हो जाता है। अगर हम स्वाध्याय नहीं करेंगे तो काम, क्रोध, मोह, लोभ व अहंकार आदि शत्रु जो कि हमारी आत्मा के भी शत्रु हैं, आत्मा को गिरा देंगे। गीता में लिखा है कि आत्मा का उद्धार भी होता है व आत्मा गिर भी जाती है। इसीलिए हम महात्मा व दुर्आत्मा शब्दों का प्रयोग करते हैं। आत्मा स्वयं ही अपना बंधु व शत्रु है। आत्मा के उद्धार की दवाई हमारे भीतर ही है। हमारे समाज में बुराईयां इसलिए आ गई हैं क्योंकि लोग स्वाध्याय नहीं करते। आत्मा के शत्रुओं का नाश करना जरूरी है। आत्मा का उद्धार शरीर, मन व बुद्धि द्वारा होता है, इन्हें ठीक रखना होगा। आत्मा को हम ही गिराते हैं। वेदों में लिखा है कि भगवान ने कई ऐसे लोक भी बनाएं हैं जहां सूर्य उदय नहीं है तथा अंधकार ही अंधकार है। जो आत्मा का हनन करते हैं उनकी आत्मा यहां पहुंच जाती है। मनुष्य जन्म हमें आत्मा के उद्धार के लिए मिला है। हम शास्त्र ऐसे पढ़ें कि उनमें डूब जाएं। गीता दुनिया का

सबसे बड़ा ग्रन्थ है। इसे पढ़ने के बाद किसी दूसरे ग्रन्थ के पढ़ने की जरूरत ही नहीं रहती। यह भगवान कृष्ण के मुख से निकली है। लोग गीता को बाजार से खरीदते तो जरूर हैं उसे बांटते भी हैं मगर उसे स्वयं नहीं पढ़ते। इसीलिए आज वह दुःखी हैं। अगर दुःखों से छुटकारा पाना है तो हम सबको स्वाध्याय करना ही होगा।

* * *

30. योग ऐसा विज्ञान है जो रोगों की जड़ तक जाता है

रोग मुक्त रहने के लिए हम सब को योग अपनाना होगा। योग एक विज्ञान है, जिसे समझ कर करना चाहिए। अगर कोई छात्र बिना समझे विज्ञान का प्रयोग करता है तो उसे हानि हो सकती है। इसी प्रकार योग भी गुरु से सीख कर करना चाहिए अन्यथा नुकसान भी हो सकता है। योग ऐसा विज्ञान है जो रोगों की जड़ तक जाता है। गुरु रोग के कारण को समझ कर उसका निदान करता है। शरीर के बिगड़ने के मुख्यत: चार कारण हैं। हमारा विज्ञान ऋषियों का बनाया हुआ है जो रोगों की तह तक पहुंचते थे। रोगों का पहला कारण शरीर के अंदर मल का संचित होना है। इससे रोग पैदा होते हैं। मल के हमारे शरीर के भीतर सड़ जाने से ही मनुष्य रोगी हो जाता है। अगर हम निरोग रहना चाहते हैं तो इस मल को बाहर निकालना होगा, जो मुश्किल कार्य नहीं है। शरीर के ऊपरी हिस्से के अंगों को शुद्ध रखने के लिए योग में कपालभाति व नेतियां बताई गई हैं। अगर फेफड़ों में मल रुका है तो प्राणायाम द्वारा, अगर पेट में

है तो वमन द्वारा, अगर आंतों में है तो शंख प्रक्षालन द्वारा इसे बाहर निकाला जा सकता है। शरीर से रस निकलते रहते हैं लेकिन अगर यह कुपित हो जाएं तो यह नुकसान पहुंचाते हैं। योग कहता है कि जब कोई मल संचित होने लगे तो उसे उसी समय बाहर निकाल दो। नेति आदि से नाक का मल साफ किया जा सकता है। इसे रोकना नुकसानदायक होता है। इससे हमारी दृष्टि कमजोर हो सकती है, कान बहरे हो सकते हैं। इतना ही नहीं मल अगर फैल जाए तो यह सिर में भी चला जाता है। सिर की हड्डियां अंदर से खोखली होती हैं, इनमें हवा रहती है। यह रेशा हवा के स्थान पर सिर में घुस जाता है। मल गले में जा कर टौंसिल व फेफड़ों में जा कर दमा कर सकता है। दुनियां में दमे का ईलाज योग के ईलावा कहीं नहीं है। पेट से भी कई बिमारियां जन्म लेती हैं। जब पिताशय बिगड़ जाता है तो इसे वमन द्वारा ठीक किया जा सकता है। पेट में पैदा होने वाली गैस शरीर के बाकी अंगों पर प्रभाव डालकर उन्हें भी खराब करती है। यह हल्की होने के कारण ऊपर उठती है। सर्वांग आसन द्वारा इसे बाहर निकाला जा सकता है। पेट के अंदर 25 फुट

लम्बी आंतें हैं जिनकी सफाई भी जरूरी है। जोड़ों के दर्द की बिमारी भी शरीर के अंदर मल होने से पैदा होती है क्योंकि हम यूरिक एसिड को बढ़ने से नहीं रोकते। इसे शंख प्रक्षालन द्वारा ठीक किया जा सकता है लेकिन आज लोग इतने आलसी हो गए हैं कि वह योग के स्थान पर दवाई खाने को प्राथमिकता देने लगे हैं। अगर वह प्रतिदिन योग करें तो न केवल वह निरोग रह सकते हैं अपितु निरोग समाज की स्थापना में भी अहम भूमिका निभा सकते हैं।

31. दस इन्द्रियों पर संयम रखने वाला ही भक्ति कर सकता है

योग में भक्ति का विशेष स्थान है। भक्ति योग की जननी है। भक्ति एक रस है इसके बिना सब कुछ शून्य है। योग दर्शन में भक्ति को ईश्वर प्रणिधान कहा गया है। ईश्वर को समर्पित होने से समाधी प्राप्त होती है और समाधी प्राप्त होने से हम ईश्वर के करीब चले जाते हैं। योग में राजयोग, हठयोग व भक्तियोग की एक त्रिवेणी है। तीनों ही अपने-अपने स्थान पर आवश्यक हैं। हठयोग प्रबल है तो राजयोग शांत है लेकिन भक्तियोग अदृश्य है। भौतिक त्रिवेणी में गंगा, यमुना का स्वरूप अलग-अलग है जो दिखलाई देता है परन्तु सरस्वती दिखाई नहीं देती, वह नीचे अदृश्य रहती है। लेकिन त्रिवेणी से सरस्वती को अलग नहीं किया जा सकता। इसी तरह अध्यात्मिक त्रिवेणी में भक्ति भी अदृश्य रहती है। यदि भक्ति दिखाई दे जाए तो भक्ति का महत्व ही खत्म हो जाता है। भक्ति में भगवान व भक्त में अन्तर नहीं रहता। जिस प्रकार माता पुत्र का प्रेम अदृश्य है, इसका कोई वर्णन नहीं कर सकता उसी प्रकार भगवान व भक्त का प्रेम भी अदृश्य

है। माता प्रेम में अपने पुत्र पर न्यौछावर हो जाती है और उसे कोई कष्ट नहीं आने देती। इसी तरह गीता में भगवान कहते हैं कि मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि मेरे भक्त का नाश नहीं होगा। भगवान उस भक्त को नष्ट नहीं होने देते जिनमें भक्ति के गुण हों। गीता में लिखा है कि भक्ति दिखाई न दे। गीता में लिखा है कि भक्त में यह गुण होना चाहिए कि वह हर ओर से शुद्ध हो। शरीर से अगर वह शुद्ध न हो व बिमारी से ग्रस्त हो तो उसे आस-पास के लोग ही पसंद नहीं करेंगे, भगवान ने तो क्या पसंद करना है। हमें भगवान के समीप रहने का यत्न करना चाहिए। हम सारा दिन बातें करते रहते हैं। परन्तु भगवान से बात नहीं करते। भक्त वह है जो **भगवान की बात** न करे बल्कि **भगवान से बात** करे। गीता में भगवान कहते हैं कि कोई किसी भी प्रकार से भक्ति क्यों न कर रहा हो उसे टोकना नहीं चाहिए। भक्ति मन में मौन रह कर करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त भक्त बहुसंगी नहीं होना चाहिए। उसे दुनियावी संबंध कम रखने चाहिएं। सबको अपना मित्र समझना चाहिए। यह तभी हो सकता है जब वह यह समझेगा कि भगवान

सब में व्याप्त है। भक्ति तलवार की धार होती है। इस पर चल कर ही पार उतरा जा सकता है। आत्मा भगवान स्वरूप है। जो भी जिसको मानता है इसमें अनन्य भाव से लगा रहे वही भक्त है। अगर संसार के कारणों से वह भगवान को भूल गया तो उसका भगवान से प्रेम कहां रह जाएगा। माया भक्त को कई बार भरमा लेती है। माया हमारे समीप है इससे हमारी संगति हो जाती है और हम इसमें कई बार भटक जाते हैं। हमें भगवान से ऐसा प्रेम करना चाहिए कि उससे नाता न टूटने पाए। भक्त को इन्द्रियों पर संयम होना चाहिए। दस इन्द्रियों पर संयम रखने वाला ही भक्ति कर सकता है। अगर हम भक्त बन जाएंगे तो यह चीजें अपने आप जीवन में आ जाएंगी। भक्त को जीवन में दुख-सुख दोनों आते हैं, यह तो अवतारों को भी आए हैं लेकिन भक्त सुख-दुख में एक समान रहता है। वह संतोषी रह कर गरीबी अमीरी में एक समान रहता है। अगर उसमें यह गुण न हो तो उसकी भक्ति समाप्त हो जाती है।

* * *

32. आत्मसात से ही ज्ञान का लाभ संभव

कोई भी विद्या बिना गुरु के प्राप्त नहीं होती। इसी तरह योग को सीखने के लिए भी गुरु की जरूरत पड़ती है। किताबें पढ़ कर योग करने से लाभ नहीं होता। राजयोग व हठयोग का सुमेल ही पूर्ण योग है। आज लोग हठयोग तो करते हैं लेकिन राजयोग करने वाले कम ही हैं। राजयोग में यम और नियम हैं। हमने देखना है कि क्या हम इनका पालन कर रहे हैं। यम नियम पांच-पांच हैं। हठयोग में शरीर की शुद्धि की बात की जाती है तो राजयोग में मन की शुद्धि की बात की जाती है। मन की शुद्धि संतोष है। जिसमें संतोष नहीं होगा उसमें माया होगी। अगर मन और शरीर दुर्बल होगा तो काम कैसे चलेगा। योगी का मन कड़ा होता है। यही योगी की तपस्या है। योगी घबराता नहीं बल्कि सब कुछ सहन करता है। इसी प्रकार अगर बुद्धि में ज्ञान न हो तो भी काम नहीं बनता। बुद्धि के नष्ट हो जाने पर सब कुछ नष्ट हो जाता है। बुद्धि में ज्ञान स्वाध्याय से आता है। आत्मचिन्तन व आत्मा का ध्यान करना ही ज्ञान है। जो

आत्मा को देखता रहता है, उसे और कुछ नहीं चाहिए। सब के घट एक ज्योत है, जिसका नाम आत्मा है। उसी को निहारने से सारा काम बन जाता है। गुरु व ग्रंथ में भी गहरा संबंध है। गुरु बताता है कि किस ग्रंथ को प्रतिदिन पढ़ना है। लेकिन आज लोग स्वाध्याय के लिए समय ही नहीं निकालते। स्वाध्याय करना बहुत जरूरी है क्योंकि उससे बुद्धि को ज्ञान मिलता है। स्वाध्याय करके उससे कुछ सीखना भी है। उसमें यम नियमों की शिक्षा होती है। गीता योग का शास्त्र है जबकि पतंजलि ने योग दर्शन ~~शास्त्र~~ लिखा है। शास्त्र व दर्शन में फर्क होता है। योग दर्शन इशारे से बताता है कि क्या करना है। दर्शन सूत्र रूप में लिखा होता है। यह सूत्र ज्ञान के महान सागर हैं इसीलिए इन्हें दर्शन कहते हैं। योग के छः दर्शन हैं। योग दर्शन दुनिया का सबसे बड़ा दर्शन है। शास्त्र का अर्थ शिक्षा है। शास्त्र शिक्षा का तंत्र होता है, इसे उपनिषद् भी कहते हैं। गुरु के समीप बैठकर जो ज्ञान प्राप्त किया जाता है उसे उपनिषद् कहते हैं। भगवान शंकर ने गीता में कहा है कि अगर ज्ञान लेना है तो गुरु के पास जाकर उसे अपने मन की बातें स्पष्ट रूप से बतानी चाहिए। गुरु के पास रह कर उसकी सेवा करनी चाहिए। ग्रंथ पढ़ने

से ज्ञान तो मिलेगा लेकिन केवल ज्ञान से मुक्ति नहीं मिलती। अगर किताबें पढ़ने से मुक्ति मिलती होती तो सब मुक्त हो गए होते। गीता कहती है कि योग तो स्वाध्याय से भी आगे है। योग कहता है कि जो पढ़ा है उस पर आचरण करो। आचरण करने वाला ज्ञानी बनता है। ग्रंथ पढ़ने का लाभ तभी होगा अगर हम उसके ज्ञान को आत्मसात करेंगे। ज्ञान की पहचान कर्म है। किसी के पास बैठकर पता चल जाता है कि वह ज्ञानी है अथवा अज्ञानी। लोग आचार्यों व धर्माचार्यों की पहचान उनके कर्म की कसौटी पर करते हैं। गीता में ज्ञानी के गुणों संबंधी विस्तार से बताया गया है। ज्ञानी में मान की इच्छा नहीं होती। जिस तरह बर्फ की पहचान ठंडक है उसी तरह ज्ञानी की पहचान शांति है। ज्ञानी शरीर व मन हर ओर से शुद्ध होता है। जिस व्यक्ति को यह नहीं पता कि देह को कैसे रखना है वह योगी व ज्ञानी नहीं हो सकता। ज्ञानी इन्द्रियों के विषय से विरक्त होता है। वह किसी के साथ धोखा नहीं करता। हमने भी अपने अंदर इन गुणों को धारण करना है।

❋ ❋ ❋

33. हमने जीवन के पाँचों कोषों का स्वरूप ही बदल दिया है

जब हम भगवान से कुछ मांगते हैं तो हमें यह भी देखना चाहिए कि क्या हम उसके अधिकारी हैं। सब धर्म मानव जीवन का लक्ष्य मोक्ष बताते हैं तथा गुरु ही मोक्ष प्रदाता हैं। अगर हमने मोक्ष प्राप्त करना है तो हमें इसका अधिकारी बनना पड़ेगा। भगवान ने जब हमें संसार में भेजा तो मोक्ष प्राप्ति के लिए उसने पाँच खजाने भी दिए ताकि उनका उपयोग कर हम मोक्ष प्राप्त कर सकें। इसमें पहला कोष शरीर से संबंधित है जिसे अन्नमयकोष कहते हैं। अगर हम शरीर का सदोपयोग करें तो मोक्ष तक पहुंच सकते हैं क्योंकि धर्म के कार्य करने के लिए शरीर जरूरी है। लेकिन हम अन्न का भी दुरुपयोग करने लगते हैं। महापुरुष कहते हैं कि जीने के लिए खाओ न कि खाने के लिए जिओ। आज अपना खान-पान बिगाड़ कर हमने अन्नमय कोष को रोगमय कोष बना दिया है। अगर शरीर रोगी होगा तो वह मोक्ष क्या प्राप्त करेगा। शरीर में शक्ति होगी तभी वह कार्य करेगा। भगवान ने हमें दूसरा कोष प्राणमय कोष दिया

हैं। प्राण नाड़ियों में प्राण शक्ति बहती है। हमने प्राणमय कोष को भी डिप्रेशनमय कोष बना दिया है। हर आदमी डिप्रेशन से पीड़ित है। डिप्रेशन में रहने वाला मोक्ष की ओर कैसे बढेगा? मन का काम बड़ी-बड़ी योजनाएं बनाना होता है। लेकिन अगर डिप्रेशन होगा तो हम कुछ भी क्रियात्मक नहीं कर पाएंगे। तीसरा कोष मनोमय कोष भगवान ने दिया है ताकि हम संकल्प करें व आशावादी बनें। लेकिन हमने मनोमय कोष को भी चिंतामय कोष बना दिया है। भगवान ने हमें बुद्धि दी है कि हम कर्म करने से पहले सोचें ताकि हम कोई गलत काम न करें। लेकिन अगर मन चिंता में रहेगा तो वह गलत-सही की पहचान कैसे करेगा। हमने विज्ञानमय कोष को भी भ्रांतिमय कोष बना दिया है। एक व्यक्ति की लड़की की शादी नहीं होती थी तो उसने एक कथाकथित भाग्य-विधाता को इस संबंध में अपना दुखड़ा सुनाया तो उसने उसे एक अंगुठी दी और कहा कि जाओ इसे अपनी बेटी को पहना दो उसकी शादी हो जायेगी। जब उसने अंगुठी की कीमत 25 हजार रुपये बताई तो व्यक्ति ने कहा कि यह कीमत ज्यादा है। इस

पर उस भाग्य-विधाता ने कहा कि लोग शादी पर लाखों खर्च देते हैं, तुम 25 हजार नहीं खर्च सकते। आज लोगों की बुद्धि पर इस कदर पर्दा पड़ा है कि वह भ्रान्तियों में फंसते चले जा रहे हैं। चारों कोष हमारे पास रहते हैं यह कहीं अन्यत्र नहीं जाते। भगवान ने अन्तिम कोष आनन्दमय कोष दिया है। जहां जा कर मुक्ति मिलती है लेकिन यहां वही पहुंच सकता है जिसके पहले चारों कोष सही हों। आज लोगों ने आनन्दमय कोष को भी दुखमय कोष बना दिया है। हम दुखमय कोष में गिरे पड़े हैं। इसका परिणाम तो नरक है। नरक से बचने के लिए हमें योगानुकूल जीवन व्यतीत करना चाहिए।

❋ ❋ ❋

34. शिष्य गुरु को अर्पित होना चाहिए

गुरु परम्परा अथवा गुरु की महिमा केवल भारत में रहने वाले ही समझ पाते हैं। किसी दूसरे देश में गुरु पूजा नहीं मनाई जाती। यह केवल भारत की मर्यादा है। यह एक विलक्षण चीज़ है जिससे हमने शिक्षा ग्रहण करनी है। दूसरे लोगों को इसका बोध ही नहीं है। हमारे शास्त्र कहते हैं कि गुरु भगवान से भी बड़ा है। गुरु से हमें वह ज्ञान मिलता है जिससे हमें मुक्ति मिलती है। दूसरे लोगों को मुक्ति का भी ज्ञान नहीं है। संसार में डुबोने वाले बहुत हैं लेकिन मोक्ष देने वाले गुरु कम ही हैं। भारत में हर व्यक्ति चाहता है कि उसका कोई न कोई गुरु अवश्य हो। हमारा गुरु ऐसा होना चाहिए जो स्वयं ईश्वर का रूप हो तभी वह हमें सही मार्ग पर डाल सकता है। इसीलिए कहते हैं कि गुरु योगी होना चाहिए। उसे हमारा मन स्वीकार करे तथा उसका जीवन शास्त्रानुसार हो। कई बार हमारा मन शास्त्रों की कसौटी पर पूरा न उतरने वाले गुरुओं की ओर चला जाता है। जब हम योगी गुरु को प्राप्त कर लेते है तब हमें उन जैसा बनने

का प्रयास करना चाहिए। अगर गुरु पूर्ण हैं तो शिष्य भी पूर्ण बनेगा। हमें गुरु का सत्संग करना चाहिए। भृंगी एक कीड़ा होता है जिसकी अपनी कोई संतान नहीं होती। वह किसी भी कीड़े को अपना कर अपने जैसा बना देता है। गुरु भी शिष्य को अपने जैसा बना देता है। ध्यान तो गुरु को स्मरण करने का ही नाम है। हमने गुरु को केंद्र मान कर उसके इर्द-गिर्द चलना है। जिस प्रकार समुन्द्री जहाज पर बैठने वाला कौआ कहीं भी नहीं जा सकता क्योंकि अगर वह उड़ कर कहीं जाने का प्रयास करेगा तो पानी में डूब जायेगा। इसी प्रकार हमारा मन भी गुरु के अतिरिक्त कहीं भी नहीं जाना चाहिए। गुरु के पास रह कर हमारे दोष समाप्त हो जाते हैं। गुरु हमारे आचार, आहार व स्वभाव को ठीक कर देते हैं। गुरु की बात का शिष्य पर प्रभाव पड़ता है। गुरु के अंदर एक रंगत होती है जो शिष्य को प्रभावित करती है। यह रंगत धीरे-धीरे शिष्य पर भी चढ़ जाती है।

* * *

35. ध्यान की अपेक्षा कर्मयोग करना ज़रूरी

जीवन में सिमरनमय की अपेक्षा कर्ममय होना ज्यादा ज़रूरी है। सिमरन करने वाले तो बहुत हैं लेकिन कर्म की कसौटी पर विरला ही उतरता है। कर्म व धर्म एक ही हैं। इन में भेद नहीं किया जा सकता। भगवान कहते हैं कि जब धर्म की हानि होती है तो मैं अवतार लेकर आता हूँ। भगवान ने जब सृष्टि बनाई तो उस में संतुलन बनाए रखने के लिए कानून भी बनाए। यही कानून धर्म हैं। मनु के धर्म शास्त्र में बताया गया है कि ईश्वर के कानून के अंदर तीन बातें प्रमुख हैं। ईश्वर ने सब को काम बांटे हुए हैं। हमें अपना कार्य ईमानदारी से करना चाहिए। अगर हम अपने कार्य का पालन नहीं करेंगे तो यही अधर्म व पाप होगा। ईश्वर ने चार प्रकार के मनुष्य बनाए, वह जो लोगों को ज्ञान दें, जो समाज की रक्षा करें, जो समाज का पालन करें व जो समाज का कार्य करें। एक का काम दूसरा नहीं कर सकता। गीता में भगवान कहते हैं कि गुण-कर्म के आधार पर ही मैंने

चार वर्ण बनाए हैं। धर्म लोगों को जोड़ता है जबकि अधर्म तोड़ता है। भगवान ने हमें जो कर्म दिया है उसे करते समय अगर मौत भी आ जाए तो वह श्रेष्ठ है। एक आदमी जब दूसरे के धर्म का पालन करता है तो वह अपने धर्म की कोताही करता है। भगवान ने हमें मनुष्य जन्म मुक्ति के लिए दिया है। इस के लिए उस ने चार आश्रम बनाए हैं। पहली अवस्था में विद्या प्राप्त कर विद्वान बनना ही हमारा कर्त्तव्य है। अगर हम पहले आश्रम में कुछ प्राप्त नहीं करेंगे तो गृहस्थ आश्रम में क्या करेंगे। खाना-पीना, सोना-जागना, संतान पैदा करना आदि क्रियाएं तो पशु भी करते हैं लेकिन ज्ञान केवल मनुष्य प्राप्त करता है। जिस ने ज्ञान प्राप्त नहीं किया उसमें और पशु में अधिक अंतर नहीं है। प्रत्येक आश्रम को 25-25 वर्षों मे बांट कर चलना चाहिए। राजा दशरथ ने जब देखा कि उस का एक बाल सफेद हो गया है तो उस ने राज सिंहासन छोड़ने का मन बना लिया। एक आश्रम में हमने दूसरे आश्रम की तैयारी करनी होती है। गृहस्थ के बाद वानप्रस्थ आश्रम आता

है। इसमें हमें ज्ञान प्राप्त करना है व शास्त्र पढ़ने हैं। आज बहुत कम लोग गीता आदि ग्रंथों का पाठ करते हैं। इस आश्रम में स्वाध्याय करके ही हम ज्ञान की तरफ बढ़ सकते हैं। इसके बाद सन्यास आश्रम आता है। इसमें हमें केवल भगवान के साथ लगाव बढ़ाना है। उचित समय में उचित आश्रम की मर्यादा पालना ही जीवन के लक्ष्य को सार्थक कर सकता है।

36. योग आदिकाल से है तथा सब युगों में लाभ पहुंचाता है

प्रभु राम लाल जी ने हमें योग का मार्ग दिखाया है। उन्होंने हमें गलत मार्ग पर चलने से रोका है। लेकिन हम माया, मोह अज्ञान में फंस कर गलत मार्ग पर जा रहे हैं। माया में फंस कर व्यक्ति भटक जाता है। अज्ञान, मोह बहुत बुरी चीजें हैं। यह हमें धर्म से बेमुख कर देती हैं। हमसे पाप भी करवाती हैं। हमारा कर्त्तव्य है कि ज्ञान का प्रचार करें, जनता में गलत भ्रमों को किसी न किसी तरीके से दूर करें। यह हमारा धार्मिक, समाजिक कर्त्तव्य है कि हम अपने भाई बहनों को भी सही मार्ग पर चलाएं। भगवान भी तो संसार में यही मार्ग दिखाने आते हैं। भगवान कृष्ण ने कहा कि योग धर्म सबसे उत्तम धर्म है। बाकी सब बातें माया की ओर ले जाने वाली हैं। योग एक बहुत भारी विद्या है जो सृष्टि बनने के समय से ही चल रही है। यह किसी भी काल, देश में सत्य है। यह योग सृष्टि के अंत तक रहेगा। कोई इसमें गलती नहीं निकाल सकता। जो योग सतयुग में था वही आज है

तथा आगे भी रहेगा। हठयोग की नेति सब युगों में लाभदायक है। योग के साधन ऋषियों ने बनाए हैं जो हर धर्म, देश, व्यक्तियों के लिए एक समान लाभदायक रहेंगे। योग के नियमों को हम देखें तो कोई यह नहीं कह सकता कि यह हमारे लिए नहीं हैं। शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय व ईश्वर प्रणिधान नियम हैं। कौन कह सकता है कि उसे शरीर अथवा मन की शुद्धि नहीं चाहिए। आज से लाखों वर्ष बाद आने वाला मनुष्य भी शरीर व मन की शुद्धि चाहेगा। अगर हम शुद्धि नहीं करेंगे तो अज्ञान वश दुख पाएंगे। जो योग करेगा वह लाभ उठाएगा। प्रभु जी ने ऋषियों की बनाई अनादिकाल से चली आ रही विद्या दी है। हम योग को छोड़कर भ्रमों में लगे हैं। संतोष भी योग के नियमों में है। जिसके मन में संतोष है वह आराम से सोएगा। जिसमें संतोष नहीं होगा वह दु:खी रहता है। तप हमें कड़ी मेहनत सिखाता है। केवल अनुकूल वातावरण चाहने वाला प्रगति नहीं कर सकता। जीवन को विपरीत परिस्थिति की भी आदत डालनी होती है। तपस्या हमने अपनी भलाई के लिए

करनी है। फिर हमारी बुद्धि भी भटकती रहती है। हम स्वाध्याय करेंगे तो बुद्धि को ठिकाना मिलेगा। मनुष्य को ईश्वर में अटल विश्वास होना चाहिए। स्वयं की सत्ता में विश्वास करने वाले अहंकारी मनुष्य का नाश निश्चित है। इसके लिए ईश्वर प्रणिधान है। ईश्वर को मानो क्योंकि हम तो उनकी कठपुतली हैं। जैसा वह नचाए, नाचना होगा। योग हमें यही सिखाता है। योग के नियमों पर चल कर ही मनुष्य जीवन को सुखमय बना सकता है तथा मोक्ष लक्ष्य तक पहुंच सकता है।

❋ ❋ ❋

37. मनुष्य के स्वभाव को धर्म की कसौटी पर परखा जा सकता है

योग पर चलने से हमारा जीवन इस लोक व परलोक में सुखी रहेगा। कोई भी व्यक्ति दुखी नहीं होना चाहता। फिर भी हम वह काम नहीं करते जिसकी ओर योग इशारा करता है। शरीर का कोई भी अंग पीड़ित हो जाए तो हमारा जीवन दुखी हो जाता है। इसी प्रकार मन में कोई पीड़ा आने से भी जीवन सुखी नहीं रहता। प्रभु राम लाल जी ने जहां हमें योग के साधन बताएं हैं वहीं यम नियम और सत्संग की शिक्षा भी दी है। यम नियम में स्वध्याय भी आता है। जो स्वाध्याय नहीं करेगा उसे ईश्वर का ज्ञान कैसे प्राप्त होगा? पाठ करते करते हमारे भीतर कई पट खुल जाते हैं। हमें अपना मन आत्मा में टिकाना है। आत्मा अमर है और अविनाशी है। अगर हम पाठ नहीं करेंगे तो आत्मा में ध्यान कैसे टिकेगा। गीता व प्रभु जी के उपदेश समान हैं। गीता जीवन को कामयाब बनाना सिखाती है तो प्रभु जी कहते हैं कि अगर स्वस्थ रहना है तो योग करो, शांति चाहते हो तो अर्न्तमुखी हो जाओ। गीता में कहा गया है कि मनुष्य दो तरह के हैं।

एक दैवी स्वभाव वाले व दूसरे आसुरी स्वभाव वाले। हम में ही कोई असुर हैं तो कोई दैव। गीता में लिखा है कि आसुरी स्वभाव वाले को बंधन व जन्म मरण मिलेगा। दैव बन जाओगे तो मोक्ष मिलेगा। हम क्या हैं इसकी परीक्षा हमने स्वयं करनी है। असुर कौन होते हैं, दैव कौन हैं यह उनके आहार, आचार व व्यवहार से परखे जाते हैं। असुर मदिरा मांस का सेवन करते हैं। उन्हें मुक्ति मिलनी असम्भव है। दैवी स्वभाव वाला सात्विक भोजन करता है। दैवी स्वभाव वाला मनुष्य दानशील होता है। दैवी स्वभाव वाले का इन्द्रियों पर संयम होता है। वह परोपकार के काम ईश्वर को संमुख रखकर करता है। वह स्वाध्याय करता है ताकि उसे ईश्वर का ज्ञान प्राप्त हो। दैवी स्वभाव वाला अच्छे कार्यों के लिए तप करता है तथा कष्ट सहन करता है। वह किसी को दुख नहीं देता। मन, वचन व कर्म से दूसरों का भला चाहता है। सत्य बोलता है। सत्य के आचरण के कारण युधिष्ठर, हरिशचंद्र आदि जाने जाते हैं। आसुरी प्रवृति वाले सत्य बोल ही नहीं सकते। उनकी जुबान से सत्य शब्द निकलते ही नहीं। दैवी प्रवृति वाले शांत स्वभाव के

तथा गंभीर होते हैं। वह त्याग वाले होते हैं। उनका मन शांत होता है। कितना भी दुख आए वह अपना संतुलन नहीं खोते। किसी की निंदा नहीं करते। अगर हमने मुक्ति लेनी है तो हमें अपने अंदर दैवी गुण पैदा करने होंगे। असुर लोग यह नहीं जानते कि किधर जाना चाहिए किधर नहीं। उन्हें पता ही नहीं क्या ठीक है व क्या गलत। उनका खानपान, मन, व्यवहार, आचार शुद्ध नहीं होता। वह धोखा भी कर लेते हैं, झूठ भी बोल लेते हैं। इस मार्ग पर चलने वाला नरक के मार्ग पर चलता है। असुरों में शुद्धता, सदाचार व सच्चाई की कमी होती है। नरक का मार्ग तो आसान है परन्तु मुक्ति का मार्ग ही मुश्किल है। हमें अपने स्वभाव में दैवी गुण लाने के लिए निरन्तर प्रयास करते रहना चाहिए।

❋ ❋ ❋

38. भयानक रोगों का सरल उपचार योग

जिस समाज में बुराईयां आ जाती हैं वह समाज कमज़ोर हो जाता है। आज औरतों पर अधिक अत्याचार हो रहे हैं। बाप अपने बेटे की शादी पर उसका मोल लगाने लगे हैं। पुरुष वर्ग में शराब का प्रचलन हो रहा है जिससे उनका मन, शरीर व बुद्धि कुंठित हो गये हैं। आज के समाज में जो लोग शराब पीते हैं उनके घरों का आर्थिक संतुलन तक बिगड़ जाता है। ऐसे में नारी शक्ति को आगे आना होगा। इतिहास गवाह है कि नारियों के अंदर कुर्बानी करने का मादा रहता है। कैकेयी ने दशरथ की जान बचाई थी तो झांसी की रानी ने अंग्रेजों से लम्बी लड़ाई लड़ी थी। हमें सामाजिक बुराईयों का सुधार स्वयं करना होगा। इसी प्रकार जब शरीर में बीमारियां आ जाती हैं तो वह भी कमजोर हो जाता है जिसे ठीक करने के लिये भगवान ने योग विद्या दी है। विद्या ज्ञान व विज्ञान दो प्रकार की होती है। ज्ञान आत्मा से व विज्ञान प्रकृति से सम्बन्ध रखता है। योग में ज्ञान विज्ञान दोनों ही हैं। योग दिव्य रामायण का 'विचार काण्ड' यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान व समाधि पर

आधारित है। जबकि शिक्षा काण्ड में षट्कर्म, आसन, मुद्रा, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान व समाधि आते हैं। विज्ञान षट्कर्म से आरम्भ होता है जो हमें स्वस्थता देता है। परन्तु आज का विज्ञान नाशकारी भी है। ऋषि-मुनि मनुष्य के जीवन के बारे में सोचते थे जबकि आज का विज्ञान विनाश का रास्ता भी दिखाता है। षट्कर्म के अन्तर्गत अगर हम नेती ही कर लें तो हम कई बिमारीयों से बच सकते हैं। बालों का जल्दी सफेद होना, माईग्रेन की दर्द, सिर की दर्द, जुकाम, साइनेस, आंखों की कमजोरी, कान का बहना, कान की दर्द, मसूडों में पाईयोरिया होना, गले पड़ना, थाईराइड व दमा आदि से नेति करने से छुटकारा पाया जा सकता है। योग कहता है कि शान्ति से लम्बी आयु तक जियो। बढ़ा हुआ पेट बड़ा खतरनाक होता है। इसमें एक ज्वालामुखी छिपा रहता है जो कभी भी फट सकता है। वमन क्रिया, नाभिचालन, पलावनी क्रिया, धनुरासन, नाड़ीचालन, सर्प आसन, जानु प्रसार, पश्चिमोतान आसन व सर्वांग आसन से बढ़ा हुआ पेट कम हो जाता है। पेट में उपद्रव मचाने वाली वायु जो कि दिमाग और दिल पर भी असर करती है से भी सर्वांग आसन मुक्ति दिलाता है।

❋ ❋ ❋

39. आसुरी सम्पत्ति वाले मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकते

धार्मिक ग्रन्थ पढ़ने से ही हमें ज्ञान प्राप्त होता है, मगर दु:ख की बात है कि आज कई लोगों को अपने ग्रन्थों के नाम तक मालूम नहीं हैं। जब जीव संसार में आता है तो मनुष्य को उस जीवन से चार फल प्राप्त करने होते हैं - धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष। मनु महाराज ने मनुस्मृति में धर्म के दस लक्षण बताते हुए उस पर आचरण करने की विधि बताई है। गीता हमें बताती है कि असली शिक्षा गुरु से ही प्राप्त होती है। गुरु शिष्य को ज्ञान से भर देता है। अगर हमने जीवन से कुछ प्राप्त करना है तो जीवन को संसार की दलदल से निकालना होगा। गीता कहती है कि मोक्ष के तीन चरण हैं। पहला चरण जीवन मुक्ति है। इसमें जब हम जीवन मुक्त हो जाएंगे तो संसार में ऐसे रहेंगे जैसे पानी के भीतर कमल का फूल। इस चरण के व्यक्तियों का जन्म योगियों के घर में होता है। मोक्ष का दूसरा चरण प्राकृतिक मुक्ति है। यह अवतारों की दशा है। इसमें मनुष्य जब चाहे जन्म लेता है जब चाहे नहीं लेता। तीसरा चरण ब्रह्मलीन मोक्ष

है। इस अवस्था में आत्मा आत्मा में समा जाती है अर्थात उसका परमात्मा से विलय हो जाता है। हमने इस प्रकार से मोक्ष प्राप्त करना है। लेकिन इसे प्राप्त करने के लिए हमारे पास कुछ पूंजी भी होनी चाहिए। हमें यह पूंजी धीरे-धीरे इकट्ठी करनी है। इस पूंजी को गीता में सम्पत्ति कहा गया है। एक सम्पत्ति अपनी होती है व दूसरी उधार ली गई सम्पत्ति। गीता में इन्हें क्रमशः दैवी व आसुरी सम्पत्ति कहा गया है। दैवी सम्पत्ति मोक्ष प्रदान करवाती है जबकि आसुरी सम्पत्ति बंधन की देवी है। कृत आत्मा के पास दैवी व अकृत आत्मा के पास आसुरी सम्पत्ति है। दैवी सम्पत्ति में निर्भयता, मन की शुद्धि, ज्ञान व योग के ऊपर स्थिरता, धन, बल, विद्या की दानशीलता, इन्द्रीयों का वश में होना, प्रत्येक काम को यज्ञ रूप से करना, स्वाध्याय करना, तप द्वारा अपने को संयम में रखना, अहिंसा का पालन करते हुए सत्य का आचरण करना, शांत रहना आदि बातें शामिल हैं। इसके अतिरिक्त हमें दूसरों के दोषों को नजर अंदाज करते हुए दूसरों पर दया की भावना रखनी चाहिए। लेकिन दुःख की बात है कि आज हिंसा में मनुष्य

जानवरों से भी आगे निकल गया है। शेर-शेर को नहीं मारता लेकिन आदमी आदमी को अकारण ही मौत के घाट उतार रहा है। हमें मन, वचन व कर्म में शौचता लानी चाहिए। अगर हम में यह सब बातें आएंगी तभी हम दैवी सम्पत्ति इकट्ठी करके मोक्ष के रास्ते पर बढ़ सकेंगे। हमें आसुरी सम्पत्ति अर्थात् धोखाधड़ी, अभिमान, अकड़पन, क्रोध, कठोरता, अज्ञान, अशिष्टाचार, असत्य, असदाचार, नास्तिकता, अईश्वरम, आशाओं के जाल में फंसना, अन्यायपूर्वक तरीके से अर्थ इकट्ठा करना आदि से दूर रहना होगा। क्योंकि ऐसे लोग तरक्की नहीं कर सकते। दैवी सम्पत्ति वाले ही मोक्ष पाने में सफल होंगे, आसुरी सम्पति वाले नीचे गिर जाएंगे। भगवान कहते हैं कि आसुरी सम्पत्ति वाले आसुरी योनी में जाते हैं। वह मुझे कभी प्राप्त नहीं कर सकते। इन लोगों को न कभी सुख मिलता है व न ही अच्छी गति मिलती है, मोक्ष की बात करना भी दूर की बात है।

* * *

40. बच्चों का भविष्य बिगाड़ रहा है आज का समाज

पहले बच्चों को धर्म व योग की शिक्षा देकर उनका बौद्धिक और अध्यात्मिक विकास किया जाता था। उन्हें धर्म पर अडिग रहने की शिक्षा दी जाती थी जिससे उन्हें पता चलता था कि धर्म क्या है। लेकिन आज के बच्चों को धर्म की शिक्षा नहीं दी जाती जोकि चिंता का विषय है। धर्म ही संसार की नींव है। इसी से संसार कायम है। सत्य पर संसार खड़ा है। पहले समाजिक और व्यापारिक कार्य वचन के आधार पर ही चलते थे। लेकिन आज इन बातों की शिक्षा नहीं दी जाती। इसीलिए हम इतने कमजोर हैं कि हमें किसी और भी लगाया जा सकता है। प्रभु राम लाल जी कहते हैं कि स्वयं योग करने के साथ-साथ अपने बच्चों को भी योग की शिक्षा दें। पहले गुरुकुलों में बच्चों को योग की ही शिक्षा दी जाती थी। बच्चों को गायत्री मंत्र सिखाया जाता था। वेदों के अंदर ही मंत्र हैं। शास्त्रों के अंदर श्लोक हैं। गायत्री वेदों का सार है और गायत्री का सार ओम शब्द है। दुख की बात यह है कि आज का मानव संकुचित विचारधारा वाला

बन रहा है जबकि पहले मनुष्य ऐसे नहीं थे। वह ईश्वर की सृष्टि में विश्वास रखते थे। बुद्धि में जो भरोगे वह वैसी बन जाएगी। पहले इसमें स्वाध्य से ज्ञान भरा जाता था आज हम लोग इसमें राग-द्वेष व चिंताएं भर रहे हैं। सृष्टि में एक प्रकाश है अगर हम उसका ध्यान करें तो बुद्धि जागृत हो जाएगी और उसका विकास होगा। बुद्धि के विकास के लिए मानसिक व भौतिक विकास जरूरी है। हमने गुरु मंत्र की साधना करनी है। सूर्य के प्रकाश के परे सविता का प्रकाश है, उससे ही योगी पैदा होते थे जिन्होंने इतने शास्त्र व ग्रंथ लिखे। लेकिन आज कई अभिभावक अपने बच्चों को धार्मिक कार्यों में ले जाने की बजाए उन्हें घर पर छोड़ आने को प्राथमिकता देते हैं। अगर हमने भावी पीढ़ी को धार्मिक मार्ग पर नहीं लगाया तो वह हमें कभी क्षमा नहीं करेंगे।

❋ ❋ ❋

41. मुक्ति कर्म से नहीं कर्मयोग से सम्भव

गीता आदि शास्त्रों में योग के कई नाम दिए हैं जिनसे हम सांसारिक जीवन व्यतीत करते हुए मोक्ष के रास्ते पर चल सकते हैं। उनमें एक कर्मयोग है। चाहे यह राजयोग व हठयोग के अंदर नहीं आता पर भगवान कृष्ण ने गीता में इसके बारे में बताया है। संसार में कर्मयोग की महत्ता है। अगर हम राजयोग व हठयोग के साथ कर्मयोग न करें तो भटक जाएंगे। अगर हम कर्म करते हैं तो यह हमारा अधिकार है कि हम जैसा चाहें वैसा कर्म करें। लेकिन इसके फल पर हमारा अधिकार नहीं है। यह तो भगवान के अधिकार क्षेत्र में है। इसलिए कर्म को विचार कर करना चाहिए। कर्म के साथ आत्म ज्ञान भी जरूरी है। अगर आत्मा को भूल कर कर्म करेंगे तो मुक्ति नहीं मिलेगी। गीता में लिखा है कि तुम जो अपने अंदर देख रहे हो वह आत्मा अविनाशी है। इससे ही सारा संसार है। हर एक में आत्मा व्यापक है। उसकी ओर ध्यान रखोगे तो संसार के नाशवान पदार्थों से हमारा

ध्यान हट जाएगा। आत्मा के अंदर कभी विकार नहीं आता। कोई उसका नाश नहीं कर सकता। जब हम आत्मा को देखते हैं और कर्म भी करते हैं तो भटक नहीं सकते। कर्म भी योग युक्त होकर करना चाहिए। उसके लिए सम्त्वयोग बताया गया है। इसमें कहा गया है कि कर्मों में इतने आसक्त न हो जाओ कि आत्मा को ही भूल जाओ। जीवन में अगर हम इसका ध्यान रख के चलेंगे तभी कामयाबी मिलेगी। हमने बुद्धियोग का भी ध्यान रखना है। बुद्धि को बिगाड़ने वाली चीज मोह है। पुत्र मोह, धन मोह आदि से बुद्धि भटक जाती है। बुद्धि अगर मोह में न फंसे तभी मोक्ष प्राप्त हो सकता है। इन सब योगों का आधार भक्ति है। भक्ति के बिना हम स्थिर कैसे रह सकते हैं। भक्ति योग के बारे में भगवान कहते हैं कि मन व बुद्धि दोनों को मेरे में लगा दो क्योंकि मन व बुद्धि कई बार एक दूसरे की विपरीत दिशा में जाने लगते हैं। अगर दोनों इकट्ठे होकर भगवान में लगेंगे तभी भक्ति मिलेगी। अगर ऐसा हो गया तो मोक्ष भी मिल जाएगा। लेकिन इन बातों को सुनकर भी लोग कुछ नहीं करते। लाखों लोग धार्मिक स्थलों पर तो

जाते हैं पर भक्ति में मन व बुद्धि को नहीं लगाते। इसीलिए उन्हें लाभ नहीं होता। मुक्ति के लिए कर्म सन्यास योग भी बताया गया है। इस योग में लगा मनुष्य यह समझता है कि वह खुद कुछ नहीं करता अर्थात् आत्मा कुछ नहीं करती। शरीर के सारे कर्म प्रकृति द्वारा हो रहे हैं। जब व्यक्ति इतना आत्म दृष्टा बन जाता है तो वह कर्म सन्यास योग करता है। दुख की बात है कि मानव मोक्ष तो चाहता है लेकिन वह इनमें से किसी भी योग को नहीं करता। इसीलिए वह भटकता रहता है।

42. धर्म स्थापना के लिए भगवान बार-बार आते हैं

योग ही धर्म है, योग से अलग कोई धर्म नहीं हो सकता। योग में यम के अन्तर्गत सत्य व अहिंसा की बात होती है और कोई भी धर्म सत्य के बिना नहीं हो सकता। गीता में कहा गया है कि जब जब धर्म की हानि होती है तो उसे पुनः स्थापित करने के लिए भगवान आते हैं। वह एक बार नहीं बार-बार आते हैं। मनुष्य का स्वभाव ऐसा है कि वह हर बार धर्म से गिर जाता है। वह काम तो शुरू करता है मगर उसे बीच में ही अधूरा छोड़ देता है। इसीलिए भगवान को बार-बार आना पड़ता है। जिस समय सारा संसार योग भूल चुका था व संसार से योग मिट गया था उस समय प्रभु राम लाल जी उस भूले हुए योग को स्मरण करवाने के लिए आए। मन को वश में करने के लिए योग में स्वाध्याय है। इसे करने से काम, क्रोध, मोह, लोभ व अहंकार दूर हो जाते हैं। पहले जब गुरुकुल से पढ़कर विद्यार्थी निकलता था तो उसे एक मंत्र याद करवाया जाता था कि स्वाध्याय करना है। भगवान कहते हैं कि वेदों में ज्ञान भरा पड़ा है पर मनुष्य

यह बात भूल चुका है। वेदों में लिखे ज्ञान को श्रुति कहते हैं। समय के साथ-साथ योग के दर्शन बन गए उनमें एक योग दर्शन है जिसमें लिखा है कि क्रिया योग करने से भी भगवान की प्राप्ति हो सकती है। तप, स्वाध्याय व ईश्वर प्रणिधान क्रियायोग के अंग हैं लेकिन हमने मन के तप के स्थान पर शरीर के तप करने शुरू कर दिए। कोई भूखा रहने लग गया, कोई नंगा, तो कोई जल में रहने लग गया। हमने उलटा मार्ग अपना लिया। आज भी लोग ऐसे लोगों के पीछे लगे हुए हैं। स्वाध्याय की बात आई तो कहा गया कि श्रुतियों को रटने से भगवान मिल जाएंगे। कोई वेदी, कोई त्रिवेदी तो कोई चर्तुवेदी बन गया। मन की असली साधना समाप्त हो गई। ईश्वर के नाम पर बड़े-बड़े यज्ञ होने लग पड़े। आग में आहुति डालने से भगवान मिल जाएंगे, ऐसी धारणा बन गई। शान्ति के नाम पर कोई यज्ञ करने लगा तो कोई एक टांग पर खड़ा होने लग गया, लेकिन ऐसे यज्ञ आदि लाभकारी नहीं होते। इन सब से तो योगी बड़ा है जो मन को वश में करता है। गीता कहती है कि कर्म करो। संसार में मत भटको। ऐसा जीवन व्यतीत करो कि मन

शुद्ध रहे, इसमें कामना व इच्छा न आए। कर्म योगी संसार में नहीं फंसता। लेकिन कर्म योग से भी मुक्ति नहीं मिलेगी क्योंकि इच्छा रहित किए कर्म का भी फल मिलता है। इसलिए भगवान की तरह कर्म करो। वह संसार बनाता है व नष्ट करता है पर उसे फल नहीं मिलता। इसलिए 'कर्म सन्यास योग' करो। इसमें आत्म दृष्टि हो जाती है अर्थात् शरीर काम करे और आत्मा काम न करें। परन्तु हमने इसका गलत मतलब निकाल कर कर्म करना ही बंद कर दिया और गुलाम हो गए। गुलामी के काल में हम में अनेकों दोष आ गए और समाज में अधर्म फैल गया। धर्म की रक्षा एवं पुनः स्थापना हेतु अब प्रभु राम लाल जी को आना पड़ा। उन्होंने कहा कि अगर तुम कर्म करते होते तो गुलाम न होते। दुश्मन चाहे कोई भी व कितना भी नज़दीकी क्यों न हो उसका बिना देरी किए नाश कर देना चाहिए। उन्होंने देखा कि मानव धर्म को भूल चुका है, उसे बिमारियों ने घेर रखा है तो उन्होंने हठयोग व राजयोग का पुनरुद्धार किया ताकि हम अपने शरीर को स्वस्थ रख कर योग मार्ग पर चल सकें।

* * *

43. सुखी रहने का मार्ग दिखाता है गुरु

जहां धर्म होगा वहां सुख तथा जहां अधर्म होगा वहां दुख होगा, इस बात को पलटा नहीं जा सकता। शास्त्र कहते हैं कि दुख दो प्रकार के होते हैं एक दुख वह जो हम टाल सकते हैं तथा दूसरे वह जिन्हें टाला नहीं जा सकता। जो दुख टाले नहीं जा सकते, उन्हें भाग्य के दुख कहते हैं। जब हम गुरु के पास जाते हैं तो वह यही शिक्षा देते हैं कि भाग्य को भोगना ही पड़ता है। गुरु हमें सहन शक्ति देते हैं कि हम अच्छे कर्म करें ताकि भविष्य में दुख न आएं। ईश्वर द्वारा लिखे भाग्य को कोई नहीं बदल सकता। जो हमने आगे कर्म करने होते हैं, उनसे हम आने वाले दुखों को दूर कर सकते हैं। आज सारा संसार इसीलिए दुखी है क्योंकि उनका आहार ही ठीक नहीं है। योग में गुरुओं ने सात्विक व मिताहार की महत्ता के बारे में बताया है। इसका पालन करने से ही हम अपने को रोगों से सुरक्षित रख सकते हैं। हमारा अज्ञान ही कई रोगों को जन्म देता है। साईनस, दमा व कमज़ोर नेत्र ज्योति आदि रोग नेति न करने के कारण

होते हैं। नेति द्वारा इन रोगों को भगाया जा सकता है। गुरु हमें शिक्षा देते हैं कि राजयोग का भी अभ्यास करो। राजयोग का आधार यम नियम हैं। हम यम नियम पर नहीं चलते इसीलिए दुखी रहते हैं। इनमें अहिंसा सर्वप्रथम है। इसका अर्थ है कि हम किसी को दुख न पहुंचाएं। हम किसी को दुख देंगे तो वह हमें भी दुख देगा। ईश्वर का नियम है कि किसी निर्दोष जीव की हत्या करना पाप है तथा हम इसके दण्ड से नहीं बच सकते। सत्य पर चलने वाले को कभी दुख नहीं आता। एक झूठ कई झूठ बोलने को विवश कर देता है। झूठ बोलने वाला कई पाप कर सकता है पर सच बोलने वाला पाप नहीं करता। हम समाज की मर्यादाओं का जब उल्लंघन करते हैं तो भी कई प्रकार के दुख आ जाते हैं। कौन से शास्त्र में लिखा है कि विवाह-शादियों में दहेज दो व शराब की नदियां बहा दो। मगर हमने शास्त्रों की सभी मर्यादाओं को तोड़कर अपने ही नियम बनाने का प्रयास किया है। इसलिए हमारे दुखों में वृद्धि हो रही है। हम धर्म की अवहेलना कर रहे हैं। धर्म कहता है कि भगवान से डरो, मगर आज लोग भगवान से नहीं डरते तथा वह कई

अनैतिक काम करने लग जाते हैं जिसके कारण हमें दुख आते हैं। हमें किसी का उपकार नहीं भूलना चाहिए। गुरु बतलाते हैं कि जीव पर तीन ऋण होते हैं जिन्हें चुकाना होता है। मगर आज तो हम पितृऋण, ऋषिऋण व देवऋण तीनों की अवहेलना कर रहे हैं। हम यह ऋण नहीं चुकाते इसीलिए समाज की यह दशा है। माता-पिता का आशीर्वाद तो भगवान की आशीश से भी बड़ा है। हम ऋषियों के लिखे ग्रंथों को भी आज ध्यान से नहीं पढ़ते। यह ग्रंथ धर्म के कोष हैं। हमारा कर्त्तव्य है कि हम ऋषियों के छोड़े ज्ञान के भंडार से लाभ उठाएं तभी ऋषिऋण उतरेगा। पृथ्वी, अग्नि, वायु, आकाश व जल आदि देवताओं के बिना जीवन नहीं चल सकता। उन्होंने हमें जीवन दिया है हम आज उन्हें ही नष्ट करने पर तुले हुए हैं। हम कब तक देवऋण की अवहेलना करते रहेंगे। हम ऋणों की अवहेलना कर रहे हैं इसीलिए हम आज दुखी हैं।

* * *

44. योग ही पूर्ण ज्ञान है

भक्ति मन की चीज है। अगर मन नहीं दिखाई देता तो भक्ति भी नहीं दिखलाई देनी चाहिए। हमारी भक्ति तभी बढ़ेगी अगर वह प्रकट नहीं होगी। प्रभु रामलाल जी एक विलक्ष्ण योग लाए हैं। जैसे सूर्य सम कोई दूसरा नहीं है, उसी तरह योग का कोई दूसरा विकल्प नहीं है। लाखों सालों में कोई योग में त्रुटि नहीं निकाल पाया। भगवान ने मनुष्य बनाया तो उसके अंदर बुद्धि दी तथा बुद्धि के कल्याण हित उन्होंने वेद आदि ग्रन्थ बनाए ताकि मनुष्य इसे पढ़कर बुद्धि का विकास कर सके। जो नहीं पढ़ेंगे उनमें ज्ञान कहां से आयेगा। उनमें भ्रांतियां बनी रहेंगी। भगवान कृष्ण कहते हैं कि भक्ति करने से मन एकाग्र होगा, शांत होगा। ऋषियों ने मनुष्य के हर पहलू के कल्याण का रास्ता बनाया है। शरीर के लिए योगियों ने खोज कर बताया कि हमारी हर ग्रन्थी से रस निकलता है। उन्होंने ऐसे साधन बनाए जिससे ग्रन्थियां स्वस्थ रहें व हम निरोग रह सकें तथा औषधियों के गुलाम बनने से बच सकें। शरीर के अंदर कुछ ऐसे अंग हैं जिन्हें जोड़कर हमारा ढांचा खड़ा किया गया है। हमने

जोड़ों को ठीक रखना है। एक जोड़ अगर खराब हो गया तो वह अंग नकारा हो जाएगा। ऋषियों ने हर एक जोड़ के लिए योग के चमत्कारी आसन बनाए हैं। आसनों की संख्या 84 लाख है। इतने अधिक साधन इसलिए बनाए गए हैं ताकि कोई अंग स्पर्श होने से रह न जाए। शरीर के 103 जोड़ हैं। इनमें पैरों के 28, टखनों के 2, घुटनों के 2, कमर के 2, पीठ की हड्डी के 32, कंधों के 2, गर्दन का 1, कुहनियों के 2, कलाईयों के 2 व हाथ की अंगुलियों के 28 जोड़ हैं। इसके अतिरिक्त 2 जबड़ों के जोड़ हैं। इसके लिए ऋषियों ने साधन बनाए हैं। योग में जीवन तत्व में सर्वांगासन करवाया जाता है, इससे टखनों, पैरों व हाथों के जोड़ों को लाभ पहुंचता है। स्कंधचालन से कंधों तथा नाड़ीचालन से कंधे तथा कमर का व पगचालन से पैरों व टखनों का व्यायाम होता है। बालमचलन घुटनों व कंधों के लिए लाभदायक है तो जानुप्रसार कमर के लिए लाभदायक है। इन सारे साधनों से कई अंग ठीक रहते हैं। यौवन तत्व में कटिचक्र से कमर की हड्डी, भुजाचक्र से कंधों, जंघाचलन से कमर व टांगों को लाभ पहुंचता है। जब हम उष्ट्र आसन करते हैं तो

पैरों की अंगुलियां तनी रहती हैं, जिससे उन्हें लाभ पहुंचता है। टखनों के लिए वज्रासन लाभदायक है। घुटनों के लिए वातायन आसन व उत्कट आसन, जंघा के लिए हलासन व द्विपादशिर आसन, पीठ के लिए हलासन, कर्ण पीड़, पश्चिमोतानासन, मत्स्येन्द्रासन, चक्रासन व सर्पासन हैं। इससे पीठ की हड्डी में लचक रहती है। सर्वांगासन गर्दन के लिए लाभदायक है। कुहनियों, हाथ की अंगुलियों व कलाईयों के लिए मयूरासन लाभदायक होता है। जबड़ों के लिए सिंहासन बनाया हुआ है। इतने आसनों के बावजूद अगर हम कोई भी साधन न करें तो शरीर ने तो बिगड़ना ही है। इसके लिए हम स्वयं दोषी होंगे।

* * *

45. शुद्ध मन व सबल शरीर ही सुखी जीवन का आधार है

योग आश्रमों की यह विशेषता है कि यहां लोग संसारिक कामनाओं की पूर्ति की बजाए ज्ञान प्राप्ति हेतु आते हैं। भगवान हमें क्या देते हैं। इस बात का हमें बोध नहीं होता । हमें भगवान से संसारिक चीजें मांगनी भी नहीं चाहिए। प्रभु अपनी कृपा से ही अपने भक्त को भवसागर से पार उतार देते हैं। प्रभु राम लाल जी के योग में यह विशेषता है कि वह अपने भक्त को योगानुकूल जीवन व्यतीत करने की शिक्षा देते हैं। हमारे जीवन में योग का उतरना जरूरी है। उन्होंने हमें हठयोग व राजयोग दिया है। हठयोग से हम अपने शरीर को निरोग रख सकते हैं। जबकि राजयोग का आधार यमनियम हैं। योगानुकूल जीवन के लिए मानसिक शांति, शुभ कर्म, योग के साधन, शुद्ध आहार, समत्व दृष्टि व सतगुरु की कृपा का होना जरूरी है। हमारा एक भौतिक शरीर है लेकिन उसके भीतर एक सूक्ष्म शरीर भी है जिसे अन्त:करण भी कहते हैं। इसमें मन, बुद्धि, अहंकार व चित्त आते हैं। मन सतोगुण से, बुद्धि रजोगुण से व

अहंकार तमोगुण से युक्त है। इसलिए अन्तःकरण की शुद्धि पहली चीज़ है। हमारे मन में शिव संकल्प अर्थात् अच्छे संकल्प आने चाहिएं और बुद्धि में विवेक होना चाहिए। मन व बुद्धि दोनों को युक्त करके हम संसारिक कार्य करें तो हमें कामयाबी मिलेगी। हमारा भौतिक शरीर संसारिक जीवन का आधार है। इसे हठयोग के साधनों द्वारा ठीक रखना है। रोगी शरीर वाला व्यक्ति मुक्ति के रास्ते पर कैसे आगे बढ़ेगा। अगर हम राजयोग व हठयोग को लगातार अभ्यास में लाएं तो हमारा जीवन कामयाब हो सकता है।

❋ ❋ ❋

46. निराकार की अपेक्षा साकार की भक्ति आसान है

भक्ति के बिना कोई काम नहीं हो सकता। भक्ति से शक्ति मिलती है। हम भक्ति करना तो चाहते हैं पर कर नहीं पाते। गीता में बताया गया है कि भक्ति भी एक साईंस है। इसके वैज्ञानिक ढंग के बिना हमें मुक्ति प्राप्त नहीं होगी। गीता में कहा है कि भक्ति का परिणाम इतना महान है कि जिस भगवान की हम भक्ति करते हैं उसका ज्ञान प्राप्त हो जाता है। उस भक्ति द्वारा हम भगवान को भी देख सकते हैं। यहां तक कि भगवान में प्रवेश भी कर सकते हैं। अगर हमने कुछ प्राप्त करना है तो हमें भगवान का अनन्य भक्त बनना होगा। भगवान तो सर्वव्यापक हैं। अर्जुन भगवान कृष्ण से पूछते हैं कि जो व्यक्ति आपकी निरन्तर भक्ति करते हैं व जो निरन्तर भक्ति नहीं करते उनमें क्या अन्तर है। भगवान कहते हैं कि जो मेरे में मन लगाकर श्रद्धापूर्वक मेरी आराधना करते हैं वह मेरे से जुड़े हुए हैं। जो मेरे स्वरूप को नहीं मानते तथा उस परमात्मा की आराधना करते हैं जो दिखाई नहीं देता, सर्वव्यापक है वह हर चीज में परमात्मा

को देखते हैं वह भी मुझे ही प्राप्त करते हैं। परन्तु इसमें उनको यत्न अधिक करना पड़ता है। अव्यक्त की भक्ति करनी शरीरधारियों के लिये मुश्किल है। हम अपनी आत्मा को नहीं देखते तो परमात्मा को कैसे देख पायेंगे। इसलिए साकार की भक्ति अपेक्षाकृत अधिक आसान है। भगवान कहते हैं कि अगर स्थिरतापूर्वक मेरे में मन नहीं लगा सकते तो भी घबराने की जरूरत नहीं। प्रभु प्राप्ति की इच्छा रखकर निरन्तर अभ्यास करो तो ही मुक्ति प्राप्त हो सकती है। अगर मन न माने तथा समय भी न मिले तो मेरे लिये कर्म करो इससे भी भक्त की मुक्ति हो जायेगी। कर्म करने का मतलब है कि जो कर्म भगवान करते हैं हम भी वही कर्म करें। भगवान कहते हैं कि तुम जो भी काम करो उसका फल मुझ पर छोड़ दो। ईश्वर के कार्य को करने से हम उसकी कृपा को प्राप्त कर लेते हैं।

* * *

47. लुप्त योग विद्या को पुनः जागृत किया प्रभु राम लाल ने

हम भगवान से कुछ लेना चाहते हैं तो हमें भगवान के पास विश्वास के साथ जाना चाहिए। जब भगवान आते हैं तो उनका एक गुण होता है कि वह अपने को प्रकट नहीं करते। अगर वह अपने को प्रकट कर दें तो संसार में उथल-पुथल मच जाएगी। वह तो हमेशा अपने को छिपाते हैं। राम को राम के समय में तथा कृष्ण को कृष्ण के समय में किसी ने भी नहीं पहचाना। प्रभु राम लाल जी कलियुग के अवतारी हैं। प्रभु जी अपने समय में किसी से भी अपने गले में माला नहीं पहनवाते थे। वह तो साधारण पुरुष की भांति रहते थे। वह हमारे लिये योग लाये। उससे हमने पूरा लाभ उठाना है। उन्होंने जंगलों में जाकर योग व औषधियों की जानकारी प्राप्त की। परन्तु संसार में आकर उन्होंने एक ही नारा दिया कि योग द्वारा हर बीमारी का बिना दवाई के इलाज संभव है। उन्होंने लुप्त योग विद्या को पुनः संसार में जागृत किया। इसके मुकाबले किसी अन्य चीज को

महत्व नहीं दिया। वह गृहस्थियों के लिये योग लाये हैं। उन्होंने साधन इतने सरल बना दिये कि हर कोई आसानी से कर सके व एक साधन से कई रोगों का इलाज हो सके। उनसे पहले लोगों को योग की पूरी जानकारी नहीं थी न ही योग की मान्यता थी। प्रभु जी ने योग की ऐसी क्रान्ति लाई कि आज संसार में योग का प्रचार निरन्तर हो रहा है। नेति का ज्ञान प्रभु जी लाए। उनसे पहले किसी को नेति का पता नहीं था कि नेति किस प्रकार की जाती है तथा कन्धे के ऊपर के सभी अंगों को नेति द्वारा स्वस्थ रखा जा सकता है। नेति हमारे दिमाग, आंखें, नाक, कान, गले व दांतों को सुरक्षित रखती है। दुनिया में कोई ऐसी दवाई नहीं है जिससे इतने अगों को सुरक्षित रखा जा सकता है। किसी का दिमाग चकरा जाता है तो कई चिकित्सक उसे ड्रिप लगा देते हैं जबकि दूध नेति करने पर यह कुछ ही मिनटों में ठीक हो जाता है। हमारे अंदर एक दोष है कि हम सुनना तो बहुत चाहते हैं परन्तु करना कुछ नहीं चाहते। योग के द्वारा शरीर को निरोग व शक्तिशाली बनाया जा सकता है। आज दुनिया में कई योग सिखाने वाले दवाईयों का भी उपयोग करने को

कहते हैं जो कि हमारे योग आश्रमों के सिद्धान्तों के विरुद्ध हैं। ऐसे गुरु, लोगों को लाभ नहीं बल्कि हानि पहुंचा रहे हैं। कंधे के नीचे के रोग के लिये जीवन तत्व के साधन करने चाहिएं। स्कंधचालन, सर्वांतान, पगचालन, नाभिचालन, जानुप्रसार, नाड़ीचालन व बालमचलन के द्वारा हम स्वस्थ रह सकते हैं। जीवन तत्व के साधन बीमार व्यक्ति भी कर सकता है। इन्हें किसी स्थान पर भी किया जा सकता है।

❊ ❊ ❊

48. त्याग, बलिदान व प्रतिशोध धर्म के लिए जरूरी हैं

महापुरुषों का जन्मदिन मनाने से हमें उनके जीवन से बहुत कुछ सीखने को मिलता है। लेकिन दुख की बात यह है कि हम महापुरुषों के जन्मदिन तो मनाते हैं मगर उनकी शिक्षाओं का अनुसरण नहीं करते। शुद्ध आचार और धर्म की रक्षा ही उनके जीवन की मुख्य शिक्षाएं हैं। धर्म की रक्षा के लिए किस प्रकार त्याग करना पड़ता है यह महापुरुषों की जीवनियां हमें बताती हैं। अगर हम में प्रतिशोध की भावना न होगी तो हम धर्म की रक्षा नहीं कर सकेंगे। त्याग, बलिदान व प्रतिशोध धर्म के लिए जरूरी हैं। जब रावण ने माता सीता का हरण किया तो भगवान राम ने लंका का सब कुछ नष्ट कर दिया। कौरवों ने द्रौपदी को बेइज्जत किया तो पांडव चुप करके नहीं बैठ गए। उन्होंने सौ कौरवों की हत्या कर दी। कृष्ण ने अपने माता पिता को कैद करने वाले कंस का वध कर दिया। आज हमारे मन्दिरों पर हमले हो रहे हैं मगर हम चुप करके बैठे हैं। ऐसा इसलिए हो रहा है क्योंकि हम धर्म के लिए बलिदान की भावना से दूर हो चुके हैं।

आज योग भी धन कमाने का साधन बन गया है। लोग योग के नाम पर बड़े-बड़े समारोह कर रहे हैं लेकिन इन समारोहों में योग के वास्तविक उद्देश्य को नज़रअंदाज कर अन्य बातों को प्राथमिकता दी जा रही है। क्या हमने कभी यह सोचा है कि भगवान हमारे लिए योग विद्या किस उद्देश्य से लाए हैं। अगर हमने योग को अपनाने की बजाय अन्य पद्धतियों को बढ़ावा देना है तो इससे हमारा ही नुकसान होगा। आज जब विदेशी योग को अपना रहे हैं तो हम इसे अपनाने में क्यों संकोच कर रहे हैं। योग को अपनाने में की गई देरी मानव के लिए घातक सिद्ध हो सकती है।

❋ ❋ ❋

49. योग ही हमें सही ढंग से जीने की कला बताता है

भगवान कहते हैं कि जब संसार में धर्म का अभाव हो जाता है तो मैं संसार में आता हूँ व धर्म को पुनः स्थापित करता हूँ। धर्म संसार का सन्तुलन है। जब यह सन्तुलन बिगड़ जाता है तो ईश्वर आकर इसे सन्तुलित करते हैं। ईश्वर का स्वरूप अलग-अलग हो सकता है। संसार में जब समस्या आती है तो भगवान उसका ईलाज भी साथ लाते हैं। अनेकों बार संसार में ऐसा हुआ है। त्रेता में जब सन्तुलन बिगड़ गया, राक्षसों ने ऋषियों को मारना शुरू कर दिया, आश्रम जला दिए गए तो भगवान राम रूप में धनुष लेकर आए व राक्षसों का संहार कर संसार में शान्ति कायम की। द्वापर में भी संसार का संतुलन बिगड़ गया था। भाई ने बहन बहनोई को ही जेल में डाल दिया था। मर्यादा नाम की कोई चीज़ नहीं रही। भगवान कृष्ण चाहे उस समय जेल में पैदा हुए परन्तु वह सुदर्शन चक्र लाए जिसके सामने कोई शस्त्र नहीं टिकता था। उन्होंने जुआ, लड़ाई - झगड़े, अमर्यादित तत्वों को समाप्त कर दिया। किसी को खत्म करने से भगवान को

पाप नहीं लगता। उन्होंने तो यह देखना होता है कि सन्तुलन कैसे कायम रहे। फिर कलियुग आया। इसमें धर्म का आधार मनुष्य का व्यवहार व आचार है। इस देश में 700 वर्ष की गुलामी व 500 वर्ष की लूटमार से हम मनुष्य, मनुष्य ही नहीं रहे। आक्रमणकारियों ने कहा कि मदिरा मांस का सेवन करो तो हम मान गए। उन्होंने कहा अपने शास्त्रों को छोड़ दो तो हमने छोड़ दिया। उनके कहने पर हम ने झूठ को सत्य से बड़ा समझ लिया। धर्म तो आज पता नहीं कहां छिपा हुआ है। धर्म सुदर्शन, धनुष अथवा गोली से ठीक नहीं होगा। इसे केवल योग द्वारा ठीक किया जा सकता है। योग ही हमें सही ढंग से जीने की कला बताता है। आज योग का प्रचार तो हो रहा है परन्तु हमारा खान-पान बिगड़ गया है। झूठ धर्म बन चुका है अर्थात् मानव को लगी बिमारी आज भी जारी है। अगर समय रहते इसका ईलाज न किया गया तो हमारा अंत निश्चित है।

* * *

50. सतोगुण, रजोगुण व तमोगुण ही आत्मा को शरीर में बांधकर रखते हैं

केवल भजन गाने से ही भक्ति नहीं हो जाती। जो मनुष्य जन्म से लेकर अंत तक प्रतिदिन कुछ समय के लिए योग के साधन नहीं करता वह कभी सुखी नहीं रह सकता। योग से व्यक्ति का सर्वपक्षीय विकास होता है। अगर हम अपने शरीर को स्वस्थ व दीर्घायु बनाना चाहते हैं तो हमारे पास हठयोग के साधन हैं लेकिन इन को अभ्यास में लाए बिना लाभ सम्भव नहीं है। हम भविष्य के बारे में नहीं सोचते जबकि एक चींटी भी वर्षा काल के लिए कुछ न कुछ जमा करके रखती है। योग के अंदर मन के लिए राजयोग है। हमने यम नियमों का पालन करना है। मनुस्मृति कहती है कि सत्य पर चलने से मन शुद्ध रहता है। योग में मन को शुद्ध रखना बताया जाता है। भगवान ने हमें बुद्धि के लिए स्वाध्याय दिया है। जितने शास्त्र हमारे हिन्दू धर्म में हैं उतने किसी धर्म में भी नहीं हैं। हिन्दू धर्म ज्ञान का भंडार है। ऋषियों ने यह सारा ज्ञान हमारी बुद्धि के लिए दिया है। शरीर, मन

व बुद्धि के बाद चौथी चीज़ आत्मा है। मोक्ष तो आत्मा को ही मिलना है योग में हमें शिक्षा मिलती है कि आत्मा का उद्धार करो। गीता कहती है कि कोशिश करो कि आत्मा न गिरे। शरीर में जो आत्मा है यह बंधन में पड़ी हुई है। सतोगुण, रजोगुण व तमोगुण जोकि प्रकृति के गुण हैं आत्मा को शरीर में बांधकर रखते हैं जैसे किसी कैदी को बांधकर रखा जाता है। उसे कहीं भी बांध दो वह कैदी ही रहेगा। इन तीनों बंधनों से छूटना आवश्यक है। जो लोग सतोगुण के अंदर जीवन व्यतीत करते हैं वह अच्छी योनि में चले जाते हैं। रजोगुण वाले संसार में फंसे रहते हैं। जबकि तमोगुण वाले नीचे जाते हैं। इन्हीं गुणों के आधार पर भविष्य की योनि का अंदाजा लगाया जा सकता है। सतोगुण मुक्ति तो नहीं देता लेकिन यह ऊपर उठाता है। यह निर्मल है, प्रकाशमय है। इसमें कोई पाप नहीं होता। लेकिन इससे मिलने वाला सुख, ज्ञान कई बार अहंकार बनकर मनुष्य को बांध लेता है। रजोगुण में राग होता है। राग से तृष्णा व संगति पैदा होती है। यह राग कर्मों के द्वारा मनुष्य को संसार में बांध

कर रखता है। जबकि तमोगुण अज्ञान से पैदा होता है। हमें पता होता है कि संसार में हमारा कुछ नहीं है। फिर भी हम अज्ञान वश सब कुछ अपना ही समझते हैं। आज लोग इसी मोह में फंसे हुए हैं। इसे हटाने के लिए प्रकाश पैदा करना होगा जो ज्ञान से पैदा होता है।

❋ ❋ ❋

51. अगर परम आयु तक जीवित रहना है तो योग के लिए समय निकालना ही होगा

भगवान के उपकारों को कभी भुलाना नहीं चाहिए। वह हमारे लिए वह विद्या खोज कर लाए जो लुप्त हो गई थी। यह विद्या योग विद्या है जो हजारों वर्षों से चली आ रही है। आज संसार यह मान रहा है कि यह विद्या संजीवनी बूटी के समान है। योग विद्या जीवन के हर पहलू मन, बुद्धि और आत्मा से संबंधित है। कोई भी क्षेत्र इससे बाहर नहीं है। हठयोग के ग्रन्थों ने एक-एक अंग को छुआ है। इसमें बताया गया है कि हमारे शरीर में 72 करोड़ नाड़ियां हैं जो एक-एक रोंगटे में फैली हुई हैं। इस बात को कोई आज तक झूठला नहीं सका है। शरीर के लिए उन्होंने जो विद्या बनाई इससे बिना औषधि व डाक्टर के शरीर को निरोग रखा जा सकता है लेकिन हम शरीर का ध्यान नहीं रखते। शरीर के लिए हठयोग का साहित्य बहुत गहरा व बड़ा है। षट्चक्र एक ऐसी विद्या है जो हमें ईश्वर तक पहुंचा सकती है। ऋषियों ने

भगवान की प्रकृति की इतनी बारीक खोज की कि आत्मा को भगवान तक पहुंचा दिया। शरीर को कैसे स्वस्थ रखना है इसके लिए किसी चीज़ की जरूरत नहीं। शरीर हड्डियों व मांस का ढांचा है। इसके अनेकों अंग व ग्लैंड हैं। उसके अंदर खून है। तीनों का ध्यान रखोगे तो परम आयु भोग सकेंगे नहीं तो अकाल मृत्यु को प्राप्त होंगे। मनुष्य की परम आयु 100 वर्ष है। जो 100 वर्ष से पहले मर जाता है वह अकाल मृत्यु को प्राप्त होता है। मनुष्य की अकाल मृत्यु नहीं होनी चाहिए। शरीर का जो ढांचा है उसके कई जोड़ हैं। हम कई बार जोड़ों को खराब कर लेते हैं। मनुष्य दो प्रकार के होते हैं। एक वह जो किसी चीज़ के आने से पहले उसका ईलाज करते हैं। दूसरे वह जो तकलीफ आने पर उसका इलाज़ खोजते हैं। योगी तकलीफ के आने से पहले उसका इलाज करता है। जो समय पर योग करता है उसका शरीर हमेशा ठीक रहता है। शरीर को ठीक रखने के लिए हमें हर रोज योग करना चाहिए। हठयोग के 84 लाख आसन हैं। इसके एक आसन से कई रोगों

का निदान होता है। रोग के आने पर योग करना बुद्धिमत्ता नहीं है। अगर परम आयु तक जीवित रहना है तो योग के लिए समय निकालना ही होगा। भ्रांति, आलस्य आदि हमारे शत्रु हैं। यह चीजें हमें योग नहीं करने देतीं। योग के लिए निश्चित समय में अगर कोई जरूरी काम भी पड़ जाए तो उसे भी बाद में करना चाहिए। शरीर के अंदर के अंग इतने बारीक व कोमल हैं कि अगर हम इनका ध्यान नहीं रखेंगे तो उन्हें ऐसी बिमारियां लग जाएंगी जिन का कोई इलाज नहीं है। किडनी, आंखें, मेदा आदि कितने कोमल हैं। इनको ठीक रखने के लिए षठ्कर्म बताए गए हैं। यह छः कर्म हैं जिनकी आगे 30 ब्रांचे हैं। यह आंखों के अंदर की पलकों की नाड़ियों तक पहुंचते हैं। आंख, कान, नाक का आपसी संबंध है। हठयोग की विद्या बहुत चमत्कारी है। लोग पहले नाक से पानी पीने से घबराते थे लेकिन अब इसके लाभ देखकर इसे करने लग पड़े हैं। शरीर के अंदर रक्त की धाराएं बह रही हैं। यह धारा सारे अंगों-प्रत्यंगों को शक्ति दे रही है। अगर यह खराब हो

जाए तो नुकसान हो जाता है। सात्विक चीजें खाने से रक्त बनता है। जो चीजें रक्त को खराब करती हैं वह तामसिक हैं। सात्विक भोजन बल, शुद्धता व सुख देगा जबकि तामसिक दुख व चिन्ता लाएगा। लेकिन हम इन सब चीजों से आंख मूद कर अपनी ही धुन में जिन्दगी जीए जा रहे हैं।

* * *

52. राम बाण का काम करती है योग में नेति

योग की जो युक्ति प्रभु रामलाल जी ने हमें दी है वह और कहीं से प्राप्त नहीं हो सकती। एक ही साधन से कई रोग ठीक हो सकते हैं। प्रभु रामलाल जी ने बताया कि तुम नाक का ध्यान रखो शरीर अपना ध्यान स्वयं रख लेगा। योग में नाक से हमें प्राण वायु मिलती है। नाक हमारे दिमाग की खिड़की है। जब हमारा नाक बंद हो जाता है तो हमारा दिमाग भी कार्य करना बंद कर देता है। जो लोग हर रोज़ नाक से पानी पीते हैं उनके सारे रोग स्वत: ही समाप्त हो जाते हैं। नेति शरीर की नाड़ियों को मजबूत करती है। इसीलिए नेति को रामबाण कहा गया है। योग में नाक से दूध भी पिया जाता है जो दिमाग की जड़ों में खाद का कार्य करता है। इससे हमारा शरीर हरा-भरा हो जाता है। अधरंग वालों के लिए दूध नेति बहुत लाभदायक है। आज लोग नाक बहने पर उसे रोकने की दवाई खाते हैं जिससे साईनस होने का खतरा बढ़ जाता है। नाक से शरीर की गंदगी बाहर निकलती

है। अगर नाक बहने लगे तो इसे रोकना नहीं चाहिए अन्यथा शरीर की गंदगी बाहर नहीं आ पायेगी। नेति ऐसी करनी चाहिए कि नाक के अंदर का मांस सख्त हो जाए और हम ऐलर्जी से बचे रहें। रबड़ नेति इतनी मोटी होनी चाहिए कि वह नाक के मांस के साथ रगड़ खाए व इससे आंखों, कानों आदि का मल आसानी से बाहर निकल सके। कई लोग नेति के संबंध में भ्रांतियां फैला देते हैं। वह कहते हैं कि क्या जुकाम होने पर नेति करनी चाहिए। नाक की तरह पेट को भी साफ रखना चाहिए। नाक के लिए जैसे हम नेति करते हैं, वैसे पेट के लिए हमें वमन जरूर करना चाहिए।

❊ ❊ ❊

53. नेति द्वारा रोगों का उपचार

हठयोग व राजयोग योग के दो पहलु हैं। पहला शरीर व दूसरा मन से संबंधित है। दोनों से ही शरीर सुखी बनता है। संसार में प्राय: जितने उपदेश होते हैं उनमें मन को प्रधानता दी जाती है जबकि शरीर की तरफ ध्यान नहीं दिया जाता, इसी कारण लोग बीमार रहते हैं। योग में मन व शरीर को बराबर का महत्व दिया गया है। बिना स्वस्थ शरीर के मोक्ष प्राप्त नहीं किया जा सकता। बीमार व्यक्ति का ईश्वर में ध्यान नहीं लगता। हमारा ध्यान शरीर की तरफ कम है। हम औषधियों का प्रयोग ज्यादा करते हैं क्योंकि हमारे परिवारों के अंदर शरीर को ठीक रखने का कोई ज्ञान नहीं। हम भोजन को भी संयमित नहीं रखते हैं। छोटे-छोटे बच्चों के साथ भी अत्याचार करते हैं। जब उनका एक आध दांत ही निकलता है तो उन्हें रोटी देना आरम्भ कर देते हैं। पहले महिलाएं बच्चों को घर की चीजों से ही छोटी-छोटी बिमारियों से ठीक कर देती थीं क्योंकि उन्हें ज्ञान था। आज की महिलाएं तो डाक्टर के पास भागती हैं क्योंकि उन्हें इन सब चीजों का ज्ञान नहीं है।

आज योगी भी योग का प्रदर्शन तो करते हैं लेकिन साथ में दवाईयां भी लिख देते हैं। लोग दवाईयों का प्रयोग तो करते हैं, मगर योग के साधन नहीं करते हैं। इससे उन लोगों का धन्धा तो खूब चलता है, मगर लोगों को कोई लाभ नहीं होता। ऐसे साधनों का ज्ञान देना चाहिए जिससे आम बिमारियां योग के साधनों द्वारा घर में ही ठीक हो जाएं। हमें पता होना चाहिए कि किस बिमारी के लिए कौन सा साधन है। सिर को उत्तम अंग कहा गया है। इसके बिगड़ने से जीवन ही बिगड़ जाता है। भगवान ने सिर के ऊपर हड्डियों की हैलमैट पहना दी है ताकि यह सुरक्षित रहे। इसमें एक ब्रह्मरन्द्र होता है जिसे सिर का रास्ता कहते हैं। इसके रुकने से खांसी, जुकाम आदि कई बिमारियां लग जाती हैं। इससे सिर का मल बाहर निकलता है इसलिए इसका प्रतिदिन शोधन किया जाना जरूरी है। मल अगर अंदर रहेगा तो आप रोगी हो जाएंगे। सिर की पीड़ा कोई बिमारी नहीं है बल्कि यह तो बिमारी की घंटी है। सिर दर्द के कई कारण होते हैं। यह गर्मी से, सर्दी से, जुकाम के कारण, ज्यादा काम करने के कारण, रक्तचाप के कारण, गर्दन

की नाड़ी दबने से, नाक से नकसीर फटने से, नजर कमजोर होने से, पेट में वायु होने से व नींद न आने के कारण हो सकती है। योग में इन सब का इलाज है। अगर सिर दर्द सर्दी के कारण है तो गर्म पानी से नेति करने से आराम मिलता है। नाक का सीधा संबंध दिमाग के साथ है। नेति से नाड़ियां खुल जाती हैं। सूत्र नेति, जल नेति व रबड़ नेति से जुकाम, दूध नेति से थकावट, रक्तचाप व गर्दन की दबी नाड़ी से होने वाली सिरदर्द ठीक हो जाती है। गर्दन की दबी नाड़ी जिसे स्पांडीलाइटस भी कहते हैं का इलाज केवल योग में है। दूध नेति से नाक से बहता रक्त भी बंद हो जाता है। इससे कमजोर नज़र ठीक हो जाती है तथा आंखों पर लगा चश्मा तक उतर जाता है। पेट के भीतर गैस हो तो जल नेति के साथ-साथ सर्वांगासन करने से गैस निकल जाती है। इसी प्रकार नेति करने से नींद भी आराम से आ जाती है। लेकिन इसके लिए जरूरी है कि हम सब प्रतिदिन नेति करें। नेति के इतने लाभों के कारण ही इसे कई रोगों के लिए रामबाण कहा गया है।

❋ ❋ ❋

54. थाईराइड के बिगड़ने से युवाओं का विकास प्रभावित होता है

शरीर ईश्वर की अमानत है। इसे सम्भालना हमारा ध र्म है। इसके लिए तप व संयम की जरूरत है। भगवान यही शिक्षा देते हैं कि देह की सम्भाल करो व अपने लक्ष्य तक पहुंचो। देह के लिए ऋषियों ने आदिकाल से हठयोग के साधन बनाए हैं। हमारे जितने भी अंग हैं उन्हें योग द्वारा ठीक रखा जा सकता है। जिसने योग नहीं किया वह जीव मोक्ष की तरफ नहीं जा पाएगा। गला मानव शरीर का महत्वपूर्ण अंग है। इसके रास्ते ही शरीर के भीतर वायु, अन्न व जल जाता है। इसमें खराबी होगी तो शरीर में खराबी होना अनिवार्य है। इसे ठीक रखने के लिए हठयोग में कई साधन बताए गए हैं।

भगवान ने गले को सुरक्षित रखने के लिए इसके आगे जुबान (जीवा) लगा दी ताकि गलत चीज अंदर दाखिल न हो। बच्चे की जुबान पर मिर्च रखने से वह चीखने लग पड़ता है कि यह चीज अंदर नहीं जानी चाहिए। लेकिन हम कई चीजों को जबरदस्ती अंदर ले

जाते हैं जो बाद में नुकसान करती हैं। गले का पहला अंग जुबान है। जुबान को हम इतना गंदा कर देते हैं कि पता ही नहीं चलता कि जो चीज गले के नीचे जा रही है वह कैसी है। गले के दोनों तरफ ग्रन्थियां हैं, जिनसे रस निकलता है जो हमें स्वस्थ रखती हैं। जब यह ग्रन्थियां सूख जाती हैं तो उनसे रस निकलना बंद हो जाता है, बल्कि सूजन पर उनसे विक्टैरियां आदि निकलते हैं, जो धीरे-धीरे अंदर जा कर रक्त में फैल जाते हैं। जिससे रक्त दूषित हो जाता है अथवा हम बिमार हो जाते हैं। हम इन ग्रन्थियों को ठीक करने की बजाए इन्हें काटने की बात करने लग जाते हैं। अगर हम प्रतिदिन वमन करते रहें तो गला खराब ही नहीं होगा। जुकाम से भी गला खराब होता है। इससे बचने के लिए हमें नेति भी करनी चाहिए। टांसिल में छोटे-छोटे छिद्र होते हैं, जब इनमें जुकाम आ जाता है तो वह सूज जाते हैं। तब उनमें बैक्टीरिया पैदा होता है और वह हमारे शरीर के लिए खतरा बन जाता है। इससे बचाव के लिए नेति व वमन करना चाहिए। गले में थाईराइड भी है। इसमें रोग आ जाए तो वह बाहर भी दिखाई देने लगता है। जिसे

गिल्लड़ कहते हैं। इससे एक रस निकलता है। यह रस शरीर के लिए बड़ा जरूरी है। इसी रस पर युवाओं का विकास निर्भर करता है। यह दस ओंस के बराबर है। अगर सूज जाए तो और बड़ा हो जाता है। इस रस को आयोडीन कहते हैं। शरीर को जितना आयोडीन चाहिए उसका 25 प्रतिशत इसमें जमा रहता है। यह आयोडीन को सीधा रक्त में भेजता है। इसीलिए इसे अमृतरस कहा जाता है। अगर यह बिगड़ गया तो इससे रस निकलना बंद हो जाता है। इसे ठीक रखने के लिए वमन, नेति व धोती करो। थाईराइड का रस न निकलने से शरीर में शक्ति नहीं रहती, सुस्ती आ जाती है व गिल्लड़ हो जाता है।

❊ ❊ ❊

55. ईश्वर प्रणिधान से शक्ति मिलती है

हम सब का भगवान से अनेकों जन्मों का संबंध है। अगर हम इसे पहचान लें तभी हमारा कल्याण हो सकता है। जब संसार में दुख होता है या कोई समस्या आती है तो भगवान किसी न किसी रूप में आकर संसार के दुखों को दूर करते हैं। इसी कारण भगवान अवतार लेते हैं अथवा उनकी शक्ति प्रगट होती है। समय-समय पर संसार में अनेकों शक्तियां प्रगट हुईं। ग्रन्थों में लिखा है कि भगवान 23 बार संसार में आए। प्रभु रामलाल जी 24वें अवतार हैं, क्योंकि संसार को उनकी जरूरत थी। इस समय संसार रोग व शोक के गर्द में डूबा हुआ है। न तो रोगों का व न ही शोक का कोई अंत है। रोगों को गिना नहीं जा सकता। प्रभु रामलाल जी इसीलिए योग को लाए हैं ताकि मनुष्य शरीर जो रोगों से घिरा हुआ है वह ऋषियों की विद्या से निरोग रह सके। शरीर को शुद्ध करने के लिए षटकर्म बताए गए हैं। पहले लोगों को नेति के बारे में भी पता नहीं था। आज से 50 साल पहले अगर किसी को नाक से पानी पिलाया जाता था तो

लोग उसे मूर्ख कहते थे। लेकिन आज लोगों की समझ में आ गया है कि सुबह उठ कर नाक से पानी पीने वालों को कंधों से ऊपर के रोग नहीं लगते, इससे आंखों की रोशनी तेज होती है व असमय बाल सफेद नहीं होते। हठयोग की क्रियाओं से शरीर के रोगों से तो छुटकारा पाया जा सकता है, लेकिन शरीर के अंत:करण को जो रोग लगें हुए हैं उनसे नहीं। अंत:करण में मन है, जिसमें संकल्प-विकल्प हर समय दौड़ते रहते हैं, बुद्धि है जो तर्क-वितर्क करती रहती है। इस कारण हमें संसार में कई बार शांति नहीं मिलती। इसमें एक चित्त है जो जन्म जन्मान्तरों के संस्कारों का भंडार है। इसके आधार पर हम जन्म लेते हैं। चित्त की वृतियां समुद्र की लहरों के समान हैं, जिन्हें हमने काबू करना है। अहंकार बुद्धि को दूषित कर देता है। योग के अंदर इसका ईलाज ईश्वर प्रणिधान बताया गया है। ठीक से ईश्वर प्रणिधान करने वाला व्यक्ति समाधि में जा सकता है। ईश्वर कोई शरीर नहीं है। ईश्वर वह पुरुष है जिसमें अविद्या आदि कलेश नहीं हैं व उसे कर्मों का फल नहीं लगता। वह संसार बनाता है, पालता है व मिटाता है। उसकी कोई इच्छा

नहीं है। वह शरीर के बिना भी रह सकता है व शरीर धारण भी कर सकता है। उसकी शरण में रहने एवं उस पर दृढ़ विश्वास करने को ही ईश्वर प्रणिधान कहते हैं। योग दर्शन में उसका नाम प्रणव है अर्थात आप उसका कोई भी नाम रख सकते हैं। उस नाम का बार-बार जाप करना चाहिए। ऋषियों ने कहा है कि वह शरीर भी हो सकता है व शरीर देखने से हम उसके स्वरूप में लीन हो सकते हैं। जो रोग साधनों से ठीक नहीं होते वह नाम सिमरन से ठीक हो जाते हैं। इससे हृदय की गांठ तक खुल जाती है, तर्क-वितर्क समाप्त हो जाते हैं व बुद्धि के कलेश खत्म हो जाते हैं।

* * *

56. योग द्वारा रोगों को आने से पहले रोका जा सकता है

राजयोग व हठयोग दोनों प्राचीन विद्याएं हैं। गुलामी के समय में योग लुप्त हो गया था। हमारे लोग योग विद्या को पूरी तरह से भूल चुके थे। प्रभु राम लाल जी ने हमारी संस्कृति का उद्धार किया है। योग तो हमारे धर्म के प्राण हैं। उन्होंने इन प्राणों में रूह फूंकी है। योग को आज मनुष्य का धर्म माना जाता है। उनके प्रयासों से ही यह क्रांति सम्भव हुई है। हम उनसे कुछ न कुछ मांगते तो जरूर हैं मगर करते कुछ नहीं। कर्म और कृपा सब जगह लागू होते हैं। इन्हीं से जीवन सुखी रह सकता है। हमारा कर्म है कि हम प्रयास करें व भगवान से प्रार्थना करें कि वह कृपा करें। देना तो भगवान ने ही है पर कर्म तो हमें ही करना होगा। बच्चे से लेकर आज बूढ़े तक योग के साधन कर सकते हैं। संसार में दो तरह के मानव होते हैं एक वह जो मुसीबत आने पर काम करते हैं। हमारा समाज पहली तरह का है। दूसरे वह लोग हैं जो यह प्रयास करते हैं कि रोग अथवा मुसीबत आए ही न।

आज जगह-जगह पर अस्पताल बन गए हैं अर्थात् बीमार होने पर उसका इलाज करवाएं। लोगों ने घरों में दवाईयां रखी हुई हैं। आग लगने पर कुआं खोदना कहाँ कि बुद्धिमानी है। प्रमाद, आलस, संशय यह मानव के सबसे बड़े शत्रु हैं। लोग कहते हैं कि रोग आने पर उसका इलाज कर लेंगे। अगर कोई उन्हें साधन बताता है तो वह उसे करने में आलस करते हैं क्योंकि उनके मन में संशय रहता है कि साधन करने से भी वह निरोग होंगे अथवा नहीं। ऐसे कई बड़े-बड़े रोग है जिन्हें योग द्वारा रोका जा सकता है। अधरंग, दमा, कैंसर, हृदय रोग व जोड़ों का दर्द योग द्वारा रोका जा सकता है। इसके लिए हमें योग के साधन करने चाहिएं व संशय तथा आलस से बचना चाहिए। अगर हम वमन क्रिया व वारिसार क्रिया द्वारा अपने शरीर की भीतर से सफाई रखें तो कैंसर हो ही नहीं सकता। इसी प्रकार दमें का आरम्भ नाक से होता है। जुकाम का मल जब आगे चला जाता है तो दमा हो जाता है। अगर हम हर रोज़ नेति करें तो दमा भी पैदा नहीं हो सकता। जोड़ों के दर्द का कोई ईलाज नहीं है। डाक्टर केवल दर्द निरोधक दवाई देते हैं। उससे रोग

ठीक नहीं होता। यह रोग बड़ी उमर में यूरिक एसिड से पैदा होता है। जब यूरिक एसिड पूरी तरह से बाहर नहीं निकलता व रक्त में मिल जाता है तो यह रोग हो जाता है। इसके उपचार के लिए हमें जीवन तत्व के साधन व वारिसार क्रिया करनी चाहिए ताकि यूरिक एसिड रक्त में न जा पाये। दिमाग की नाड़ियों के कमजोर होने पर अधरंग होता है। इसके लिए प्रतिदिन जलनेति व दूधनेति करनी चाहिए। ऐसा करने वाले को कभी अधरंग नहीं होता। हृदय रोग खाने में चर्बी की मात्रा बढ़ने व हृदय की शक्ति कमजोर होने से होता है। इसके उपचार के लिए योग में प्राणायाम बताया गया है। प्राणायाम करने वाले का हृदय मजबूत रहता है।

❋ ❋ ❋

57. पुण्य कर्मों से मिलते हैं सतगुरु

धन, यश व परिवार की प्राप्ति स्थाई नहीं होती लेकिन योग समय बीतने पर भी हमारा साथ नहीं छोड़ता। योग न केवल इस जन्म में बल्कि अगले जन्म में भी हमारा साथ देता है क्योंकि इसका प्रभाव हमारे अंत:करण पर पड़ता है। हम जो मानसिक साधना करते हैं वह हमारे मन पर जम जाती है। इसी चीज को समाधि कहते हैं। जो चीज आगे चल कर हमें सुख दे उसे ही समाधि कहते हैं। कुछ लोगों को शिकायत रहती है कि वह ध्यान में बैठते हैं मगर उनका ध्यान नहीं लगता। ध्यान लगना आदि बातें हमारे पिछले जन्म के संस्कारों पर निर्भर करती हैं। जिन लोगों को शरीर की बजाए भगवान से प्रेम होता है उनका ध्यान शीघ्र लग जाता है। उनके पिछले जन्म के संस्कार ही उन्हें शीघ्र गुरु चरणों में ले जाते हैं। गुरु व शिष्य का संबंध पुराना होता है। दोनों का एक दूसरे से अटूट सम्बन्ध है। जो शिष्य गुरु की प्राप्ति कर लेता है उसकी कई समस्याएं तो स्वत: ही हल हो जाती हैं। अगर हमने पिछले जन्म में योग नहीं

किया तो इस जन्म में अवश्य करना चाहिए क्योंकि जो योग करते हैं उन्हें ही पूर्ण सदगुरु मिलते हैं तथा सदगुरु ही मोक्ष प्रदान करते हैं। उनकी कृपा के बिना कुछ नहीं प्राप्त किया जा सकता। आत्मा के उद्धार के लिए जो काम किया जाता है उसे ही पुरुषार्थ कहते हैं तथा योगाभ्यास का दूसरा नाम ही पुरुषार्थ है। इसके लिए निरंतर अभ्यास करना पड़ता है। ध्यान करते समय हम अपने इष्ट में इतने लीन हो जाएं कि हमें समय, स्थान व स्वरूप तक का पता या बोध नहीं रहे। अगर इस तरफ ध्यान लगा रहेगा तो संसार में ध्यान नहीं जाएगा। ध्यान समाधि से पहले की सीढ़ी है। ध्यान में मन की वृत्ति एक धारा में चलनी चाहिए। ध्यान के लिए एक इष्ट हो तथा मन इससे बंधा हो। मन अपना इष्ट स्वयं निर्धारित नहीं करता है। इष्ट की प्राप्ति गुरु से होती है। गुरु हमारे पूर्व के पुण्य कर्मों से प्राप्त होते हैं।

❋ ❋ ❋

58. गुरु के बिना मन कभी भी एकाग्र नहीं हो सकता

शरीर व मन दोनों हमारे लिए समस्या हैं। अगर हम योग को नहीं अपनाते तो यह दोनों परलोक तक परेशान करते हैं। अगर मन को शांत करना है तो गुरु-चरणों की प्राप्ति आवश्यक है। गुरु के चरणों में मन रख देने से सारा जीवन व परलोक दोनों ठीक हो जाते हैं। शास्त्र कहते हैं कि गुरु ही ब्रह्मा, विष्णु व महेश हैं। दूसरे देवता इनके ही स्वरूप हैं तथा वह इनमें ही समाए हैं। गुरु के अंदर सारे देवता हैं। हम सब गुरु के पास जाना चाहते हैं लेकिन समस्या है कि हम उसे ढूंढें कहां? गुरु की खोज गुरु मिलने तक जारी रहती है। हम भगवान को पाने के लिए गुरु चाहते हैं। इसलिए पहले यह देखें कि हम जिस गुरु के पास जा रहे हैं, क्या उसे भगवान मिले हुए हैं। जिसे स्वयं भगवान न मिले हों वह दूसरे को क्या देगा? हम संसार की मोह माया से छुटकारा

पाना चाहते हैं। इसलिए हमें यह भी देखना चाहिए जिसे हम गुरु बना रहे हैं, क्या वह स्वयं मोह माया से परे है। हमने गुरु के हाथ जीवन समर्पित करना है। इसलिए गुरु की पहचान सावधानी पूर्वक करनी चाहिए। जो गुरु स्वयं धन के पीछे भाग रहा हो वह शिष्य को कैसे रोकेगा? माया के भी तीन रूप हैं। गुरु को परिवार का मोह नहीं होना चाहिए न ही उसे यश की इच्छा होनी चाहिए। ऐसा गुरु ही हमें कुछ दे सकता है। ऐसे गुरु के बिना मन कभी भी एकाग्र नहीं हो सकता। ऐसा गुरु ही मन को भाता है तथा गुरु व शिष्य का संबंध मन का है। गुरु के पास अपना मन खोल कर रख दें। अपने मन के संशय निवृत कर दें। उसके पास रह कर उसकी सेवा करो। गीता में भगवान कृष्ण अर्जुन को कहते हैं कि सब धर्मों को छोड़ कर मेरी शरण में आ जाओ। जब तक हम सब कुछ त्याग भगवान की शरण में नहीं जाते मन एकाग्र नहीं हो सकता क्योंकि मन बड़ा चंचल है। मनुष्य जन्म बड़ी मुश्किल से मिलता है। अगर हम इसका कल्याण

नहीं करते तो क्या लाभ? भगवान कहते हैं तुम्हारे पास शरीर, मन व बुद्धि है। शरीर तो आप भगवान के पास लाते हो लेकिन मन व बुद्धि कहीं और छोड़ आते हो। अगर मन व बुद्धि को भी गुरु चरणों में लाकर स्वाहा कर दो तो कल्याण निश्चित है।

❋ ❋ ❋

59. ईश्वर की शरण में जाने से ही मन को शांति मिलती है

मनुष्य जन्म भवसागर से पार होने के लिए मिला है। अगर हम इस लक्ष्य को प्राप्त नहीं करते तो यह जन्म व्यर्थ है। मोक्ष केवल मनुष्य मात्र के लिए है। इस का उपाय योग है। जब मनुष्य संसार में आता है तो उसे शरीर व मन मिलते हैं। जब शरीर व मन दु:खी होते हैं तो हम दु:खी होते हैं। शरीर के लिए हम योग करके दीर्घायु व निरोग रह सकते हैं। योग करने से शरीर स्वस्थ रहता है। शरीर के सुखी रहने से मन पर प्रभाव पड़ता है। मन को सुखी रखना ज्यादा मुश्किल है। कई लोग कहते हैं कि ध्यान लगाने से मन सुखी होता है लेकिन अधिकतर लोग ध्यान लगाने के बावजूद सुखी नहीं हैं। मन को स्थिर करने के लिए बहुत कुछ करना पड़ता है। केवल बैठने मात्र से ध्यान नहीं लग जाता। मन को एकाग्र करने के लिए हमें ईश्वर की भक्ति करनी चाहिए। बिना ईश्वर की शरण में जाए मन सुखी नहीं हो सकता। ईश्वर की शरण में जाने से मन को उसी प्रकार शांति मिलती है जैसे पानी पीने से प्यास बुझ जाती है।

इसके लिए हमारा आस्तिक होना जरूरी है। हमें भगवान पर विश्वास होना चाहिए। हमें अपने जीवन का अवलोकन करना चाहिए। भक्त का भोजन भी सात्विक होता है क्योंकि वह जानता है कि तामसिक चीजें खाने से रोग पैदा होते हैं। रोगी मनुष्य ध्यान नहीं लगा सकता। जब हम ध्यान में बैठना चाहें तो शरीर में स्फूर्ति होनी चाहिए। प्राणायाम व आसन से स्फूर्ति आती है। ध्यान के लिए आसन ऐसा होना चाहिए कि हम आराम से लम्बे समय तक ध्यान में बैठ सकें। आसन सुखपूर्वक होना चाहिए। पद्मासन, सुखासन, सिद्धासन, वज्रासन में बैठकर ध्यान लगाया जा सकता है। ध्यान का अर्थ मन को एकाग्र करना है। ध्यान किसी प्रकार से भी लगाया जा सकता है। ध्यान का कोई न कोई लक्ष्य होना चाहिए। हमें एक स्थान पर एक इष्ट का ध्यान लगाना चाहिए। अगर एक इष्ट नहीं है तो ध्यान नहीं लग सकता। मन को एक जगह टिकाना पड़ता है। जिसमें श्रद्धापूर्वक ध्यान लगे वही इष्ट है। इष्ट पर मन को विश्वास होना चाहिए। इष्ट की प्राप्ति गुरु से होती है। इष्ट का जब हम ध्यान करते हैं तो गुरु को किसी भी हालत में नहीं छोड़ा

जा सकता। गुरु विघ्न विनाशक होते हैं। गुरु शिष्य पर किसी न किसी रूप में कृपा करते हैं। ध्यान शरीर के अंदर किया जाता है। कई लोग ध्यान में बैठते हैं पर उठने पर फिर संसार में उलझ जाते हैं। इसके लिए स्वाध्याय करना चाहिए ताकि संसारिक कार्य करते हुए भी हम भगवान का सिमरण करते रहें।

❋ ❋ ❋

60. ईश्वर एक ज्योति है, जिसको गुरु द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है

गुरु की शरण त्यागना नाश मार्ग पर चलने के समान है। हम भगवान के चरणों में बैठकर उसके गीत गाते हैं तथा उसके बताए मार्ग पर चलने का प्रयास करते हैं। लेकिन इसके बावजूद भी कई बार दुविधा में पड़ जाते हैं क्योंकि इस संसार में हमें कई रूकावटों का सामना करना पड़ता है। हम आज दो सड़कों पर खड़े हैं। किस ओर जाना है इसका निर्णय हमने स्वयं करना है। एक मार्ग भगवान की ओर ले जाता है तो दूसरा मार्ग संसार की ओर ले जाता है। मार्ग का निर्णय करते-करते कई बार हमारा जीवन समाप्त हो जाता है। हमें दृढ़ता से निर्णय लेना चाहिए कि हमने भगवान के मार्ग की ओर जाना है। भगवान का मार्ग योग का मार्ग है जो सबसे प्राचीन व ऋषि-मुनियों का मार्ग भी है। अगर हम ऐसा सोचें तो हमारा मन स्वयं ही मान जाएगा कि यही ठीक मार्ग है। प्रभु राम लाल जी कलियुग के अवतार हैं। उन्होंने वह मार्ग दिखलाया है जिसमें भूल भुलैइयों का कोई अंदेशा नहीं है। इस मार्ग पर कुछ कठिनाईयां हैं

जिनका हमें मुकाबला करना होगा। अष्टांग मार्ग के आठ अंग हैं। यम नियम इस पहले मार्ग की नींव हैं। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य व अपरिगृह पांच यम हैं तो शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय व ईश्वर प्रणिधान पांच नियम हैं। इन दस में से नौ तो ऐसे हैं जो पकड़ में नहीं आते। वह अति सूक्ष्म हैं। स्वाध्याय ही ऐसा है जो दिखाई देता है। इसके विषय में कहा गया है कि इसके करने से योग के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। आज हमारा समाज स्वाध्याय से वंचित है। इसीलिए वह भटका हुआ है। स्वाध्याय से अभिप्राय किसी ग्रंथ का पाठ करना है। स्वाध्याय के लिए हमें उचित भाषा का बोध भी आवश्यक है। जब मुस्लिमों का भारत पर कब्जा था तो हम उर्दु पढ़ने लग गए, जब अंग्रेज आए तो अंग्रेजी पढ़ने लग गए। हमारी भाषा तो संस्कृत है। हमारे ग्रंथ एक से एक बढ़कर महान हैं। भाषा की कठिनाई के चलते हम निर्णय नहीं कर पाते कि किसे पढ़ें। अंग्रेजी में गीता व वेद पढ़ना चाहें तो वह बात नहीं बनेगी जो हिन्दी व संस्कृत में पढ़ने से मिलेगी। संस्कृत भारतीयता की पहचान है। स्वाध्याय से हमें इष्ट मिलता है। प्रश्न यह

पैदा होता है कि न तो ईश्वर का पता लगता है, न ग्रंथ का। कौन सा ग्रंथ पढ़ें, किस ईश्वर को मानें। इस बात का ज्ञान भी गुरु करवाता है। गुरु व ईश्वर में चोली दामन का संबंध है। ग्रंथ ईश्वर के किसी न किसी रूप को प्रदर्शित करते हैं। गुरु द्वारा दिए ग्रंथ में ईश्वर व स्वाध्याय दोनों मिलते हैं। ईश्वर निराकार है लेकिन गुरु साकार है। ईश्वर एक ज्योति है, जिसको गुरु द्वारा दिए ग्रंथ में देखा जा सकता है। अगर हमने भगवान के बताए मार्ग पर चलना है तो इन ग्रंथों का रोज पाठ करना होगा। हमें गुरु की आज्ञा माननी चाहिए। अगर हम ठीक तरह से ग्रंथ पढ़ेंगे तो इसका प्रभाव बहुत देर तक रहेगा। खाते-पीते, काम करते इसका प्रभाव बना रहेगा। इससे स्वाध्याय का मनन होगा। जीवन में भी इसका प्रभाव आने लगेगा, जिससे मन की एकाग्रता होने लगेगी। स्वाध्याय से हमें ज्ञान की प्राप्ति होगी और अपने जीवन के लक्ष्य का रास्ता मिलेगा।

* * *

61. योगी गुरु ही मुक्ति दे सकता है

जो अज्ञान को दूर करे वही गुरु है। इसीलिए योग में गुरु को बहुत महत्व दिया गया है। लेकिन गुरु भी योगी गुरु होना चाहिए। जो योगी गुरु न होगा वह जीवन का विनाश कर देगा। गुरु ईश्वर से युक्त होता है। उसमें भगवान से शक्ति आती है जो वह दूसरों को देता है। अगर वह माया से जुड़ा होगा तो शिष्य को कुछ नहीं दे सकेगा, वह केवल उसे गुमराह ही करता रहेगा। गुरु के यम नियम इतने परिपक्व होने चाहिएं कि वह शिष्य के लिए आदर्श बने। अगर गुरु लोभी है तो इसका अर्थ है कि वह संतोषी नहीं है। जिस गुरु में अहिंसा व तपस्या नहीं है अथवा जो यश चाहता है वह यम नियमों पर खरा नहीं उतरता। गुरु व हमारे जीवन का संबंध है। गुरु के बिना हमारे जीवन में अंधेरा है। गुरु ही हमारे जीवन में ज्ञान का प्रकाश ला सकता है इसलिए शास्त्रों में गुरु के विषय में बहुत कुछ लिखा गया है। गुरु शिष्य के जीवन को अनुशासित करता है। वह शिष्य की गलतियां निकाल कर उसे दोष रहित करता है। गुरु एक रंगरेज भी

है। जिस प्रकार लालारी किसी भी प्रकार के कपड़े को सुन्दर रंग से रंग देता है उसी प्रकार गुरु शिष्य के जीवन को शुद्ध कर अपने रंग में रंग लेते हैं। गुरु मुक्ति भी देता है। गुरु के बिना कोई भी भवसागर से पार नहीं उतर सकता। जब हम मुसीबत में होते हैं तो कोई साथ नहीं देता लेकिन गुरु को याद करने पर मुसीबत टल जाती है। ईश्वर हमें ज्ञान नहीं देता चाहे वह हरेक के पास है। ज्ञान तो गुरु ही देता है। गुरु हमारे मन को ठहराने के लिए ईश्वर का स्वरूप देता है। जब हम उस स्वरूप को देखते हैं तो उसमें गुरु का रूप नजर आता है। गुरु हमारे लिए एक सहारा है। भगवान हमेशा हमारे साथ होते हैं लेकिन दिखाई नहीं देते। गुरु कृपा से ही उन्हें देखा जा सकता है। योगी गुरु सूर्य के समान है जबकि योग विहीन गुरु तो दीपक के समान भी नहीं हैं। परमेश्वर व परमगुरु एक समान हैं। दोनों में एक ही शक्ति है, लेकिन गुरु ज्ञान देता है इसलिए वह विशेष है। एक स्थान पर चाहे करोड़ों सूर्य हों मगर मन में प्रकाश नहीं आएगा, प्रकाश तो गुरु के साथ ही आएगा। अगर हम गुरु की पूजा करें तो इसमें सभी देवताओं की पूजा आ जाएगी क्योंकि जड़

में पानी देने से पूरा वृक्ष हरा हो जाता है। इसी प्रकार गुरु की सेवा करने से सब देवता प्रसन्न हो जाएंगे। लेकिन आज कई लोग गुरु से इच्छा पूरी न होने पर भाग जाते हैं। असली शिष्य तो वही है जो गुरु के झिड़कने पर भी उसका द्वार नहीं छोड़ते। जिसके पास योगी गुरु नहीं है उसका तो जीवन ही व्यर्थ है।

62. गुरु ईश्वर की सृष्टि को निखारता है

गुरु के द्वार जैसा दूसरा कोई स्थान नहीं है। गुरु मनुष्य के लिए जो कर सकता है, वह दूसरा कोई नहीं कर सकता। ईश्वर हमें सृष्टि में भेजता है तो गुरु ईश्वर की सृष्टि को निखारता है। गुरु हमारे जीवन का माली है। ईश्वर हमें पैदा तो करता है पर गुरु हमें इंसान बनाता है। संसार के अंदर भगवान ने दो प्रकार के स्वभाव के मनुष्य पैदा किए हैं। एक अच्छे स्वभाव वाले जिन्हें हम दैवी स्वभाव वाले कहते हैं तो दूसरे बुरे स्वभाव वाले जिन्हें आसुरी स्वभाव वाले कहते हैं। यह सब गुणों के कारण होते हैं। एक परिवार में भी अलग-अलग स्वभाव वाले हो सकते हैं। ईश्वर ही कांटा बनाता है व ईश्वर ही फूल। लेकिन फूल का स्वभाव कांटे से बिल्कुल अलग होता है। इसी तरह मनुष्य का स्वभाव है। कांटा तो फूल नहीं बन सकता पर आसुरी स्वभाव वाला मनुष्य गुरु कृपा से दैवी स्वभाव वाला बन सकता है। गुरु ऐसा करने में सक्षम है। अगर हम आसुरी स्वभाव वाले हैं तो हमें गुरु के पास जाना चाहिए वह हम पर उपकार करके हमारा स्वभाव बदल सकते हैं। जो दैवी स्वभाव वाले हैं

उन्हें मुक्ति मिलती है और आसुरी स्वभाव वाले बंधन में रहते हैं इसी लिए नरक को प्राप्त होते हैं। आसुरी स्वभाव वाले जन्म जन्म तक इसी स्वभाव के बने रहते हैं और वह ईश्वर को प्राप्त नहीं कर सकते । गुरु हमारे स्वभाव को बदल सकते हैं लेकिन इसके लिए हमें कुछ गुणों को अपनाना होगा। हमारा मन चंचल है। यह झट बुराई की ओर चला जाता है। हमने मन को साफ रखना है। गुरु की संगत में रह कर तथा उसके आशीर्वाद से ही ऐसा संभव है। दैवी स्वभाव वाला मन्दिर जाने को प्राथमिकता देता है जबकि इसके विपरीत स्वभाव वाला मन्दिर की बजाय अन्य स्थानों पर जाने को प्राथमिकता देता है। दैवी वृत्ति वालों का समय स्वाध्याय में अधिक गुजरता है। वह गुरु के ग्रंथ गीता आदि पढ़ते रहते हैं। हमने भी अपने अंदर यह गुण पैदा करना है। जिसमें गीता पढ़ने की रुचि हो उसे कोई और चीज पढ़ना पसन्द नहीं होता। प्रेम के साथ ग्रंथ का रस लेना ही स्वाध्याय है। जो स्वाध्याय नहीं करते उनमें दिव्य गुण आ ही नहीं सकता। स्वाध्याय एक नशा है। एक बार लग जाए वह छूट नहीं सकता। हमें अच्छी चीजों को संग्रह करना चाहिए। इससे दीर्घकालीन लाभ होगा। गुरु के पास जाकर सत्य बोलने की आदत बन जाती है। लेकिन आज

के दौर में कई गुरु भी सत्य के मार्ग पर नहीं चलते। सत्य के मार्ग पर चलने के लिए कई कुर्बानियां करनी पड़ती हैं। हरीश चन्द्र ने सत्य के मार्ग पर चल कर कई दुख तो सहे पर उसे मोक्ष की प्राप्ति भी हुई। जिस चीज में पहले दुख बाद में सुख हो वही ठीक है। अगर हम इन गुणों में से एक दो को भी अपना लें तो बाकी सब अपने आप आ जाएंगे।

❋ ❋ ❋

63. भक्ति ही मोक्ष का मूल आधार है

प्रभु राम लाल जी के जन्म से पहले संसार में योग को एक तमाशा समझा जाता था। धार्मिक शास्त्रों की ओर देखा भी नहीं जाता था। आज शास्त्रों का आदर किया जाता है व पूरे विश्व में योग की महत्ता को स्वीकार किया जाने लगा है। योग दर्शन व गीता में ज्ञान का सागर भरा पड़ा है। योग दर्शन के एक सूत्र के अनुसार कुछ लोगों को योग की साधना करनी पड़ती है फिर वह समाधि की ओर बढ़ते हैं जबकि कुछ लोगों को जन्म से ही समाधि सिद्ध होती है। योग दर्शन व गीता में समानता है। योग कहता है कि चित्त की वृतियों को रोको, लेकिन इसका अंतिम लक्ष्य मोक्ष है। योग दर्शन में मोक्ष को निर्वाण कहा गया है। गीता वैराग्य से आरम्भ होती है। पहले चार अध्यायों में जीवन मुक्ति के बारे में बताया गया है। जिसे विदेह अवस्था भी कहते हैं। लेकिन इस अवस्था में जन्म लेना पड़ता है। पांचवे, छठे व सांतवे अध्याय में प्रकृतिलय अवस्था के बारे में बताया गया है। ऐसा जीव जब पुनः जन्म लेता है तो उसे

साधना की जरूरत नहीं होती। वह अपनी मर्जी से जन्म लेता है। प्रकृति उसे जन्म लेने के लिए मजबूर नहीं कर सकती। यह भगवान कृष्ण की अवस्था है। वह कहते हैं कि 'मैं' युग-युग में जब चाहे आ सकता हूँ। इस अवस्था में 'मैं' बची रहती है। इसे दूर करने के लिए अक्षर ब्रह्म योग बताया गया है कि हम भगवान जैसा बनने का प्रयास करें। योग का आरम्भ वैराग्य से होता है लेकिन इसका मूल बीज भक्ति है। भक्ति के बिना कुछ भी सम्भव नहीं है। भक्त के अंदर दैवी गुण होते हैं। वह शास्त्रों के अनुसार कार्य करता है। अब प्रश्न पैदा होता है कि जो व्यक्ति शास्त्रों की विधि को नकारता है मगर श्रद्धा व विश्वास से काम करता है उसकी स्थिति क्या होगी। इसका उत्तर देते हुए भगवान कृष्ण 17वें अध्याय में बताते हैं कि श्रद्धा भी तीन प्रकार की होती है। अपने स्वभाव के अनुसार उसका अत:करण सात्विक श्रद्धा, राजसिक श्रद्धा अथवा तामसिक श्रद्धा से जुड़ा होता है। अलग-अलग श्रद्धा वाले अलग-अलग उद्देश्यों से काम करते हैं। मनुष्य श्रद्धा का पुतला है। उसका ढांचा ही श्रद्धा से बना है। भक्ति, खान-पान, यज्ञ, व्रत व दान

आदि से आप उसके भीतर की सात्विक, राजसिक व तामसिक श्रद्धा को माप सकते हैं। सात्विक श्रद्धा वाला मनुष्य देवताओं की पूजा करता है, आयु बढ़ाने वाला, स्वास्थ्य वर्धक खाना खाता है। वह फल की इच्छा के बिना कर्म करता है। वह सोचता है कि मनुष्य का धर्म ही कर्म करना है। वह तप भी श्रद्धा से करता है। वह शरीर से माता-पिता, गुरु व अतिथि की पूजा करता है व फल की इच्छा नहीं रखता। वह वाणी से ऐसे शब्द बोलता है जो मधुर हों व सत्य हों। वह मन से निर्मल, भावों से शुद्ध होता है, वह दान भी पात्र को देता है अर्थात ऐसे व्यक्ति को दान देता है जिससे बदले में कुछ लेना नहीं होता। अगर उसकी श्रद्धा राजसिक है तो फल भी उल्टा होगा। राजसिक श्रद्धा वाला यक्षों व राक्षसों की पूजा करता है ताकि उनसे कुछ प्राप्त कर सके। उसे नमकीन, तीखी व कड़वी चीजें पसंद होती हैं। इसके परिणाम स्वरूप दु:ख शोक व रोग आते हैं। उनके यज्ञ पहले फल की इच्छा लेकर होते हैं। कई बार वह धोखा देने के लिए यज्ञ करता है। वह तप भी अपने स्वार्थ के लिए करता है। वह लम्बे-लम्बे व्रत रखकर दुनिया में

दिखावा करता है। वह ग्रह टालनेके लिए दान करता है। दान उसे देता है जिससे बदले में कुछ मिले। तामसिक श्रद्धा वाला भूतों-प्रेतों की पूजा करता है ताकि उसे ऐसा मंत्र मिल जाए जिससे वह किसी को नुकसान पहुंचा सके। उसका भोजन रूखा-सूखा व बासी होता है जिससे उसे बिमारियां लग जाती हैं। ताजा भोजन उसे पसंद नहीं आता। उसका यज्ञ विधिहीन होता है। वह न मंत्र पढ़ता है न किसी को कुछ खिलाता, पिलाता है। उसकी इसमें श्रद्धा भी नहीं होती। मूर्खता वश वह ऐसा तप करता है जिससे उसके शरीर का आकार बिगड़ जाता है। वह बिना समय व स्थान को देखे अपात्र को दान देता है। अपात्र उस दान का दुरुपयोग करता है।

* * *

64. योग के पुनरुद्धार हेतु अवतार लिया प्रभु राम लाल ने

योग एक ऋषियों की विद्या है। यह विद्या मानव कल्याण के लिए है। विडम्बना है कि इसके बावजूद यह विद्या हज़ारों वर्षों तक भारत से लुप्त रही। इसी विद्या के पुनरुद्धार के लिए प्रभु राम लाल ने अवतार लिया ताकि इस विद्या के सहारे मानव मोक्ष प्राप्त कर सके। जब सूर्य निकलता है तो उसकी पहली किरण से ही रोशनी हो जाती है। इसी प्रकार प्रभु राम लाल जी के बचपन से ही चमत्कार देखने को आये। जब वह तीन वर्ष के थे तो एक मरणासन बुढ़िया की भगवान के दर्शनों की इच्छा हुई। उसने बालक राम लाल को देखने की इच्छा जाहिर की। दर्शन करते ही वह मरणासन बुढ़िया ठीक हो गई। प्रभु राम लाल जी अपने पिता से विद्या ग्रहण तो करते थे परन्तु वह तो योग का उद्धार करने आए थे। योग तो उनके पिता व अन्य लोगों को भी नहीं आता था। इस विद्या को जानने के लिए वह घर में बिना बताए कनखल चले गए, वहां शास्त्र तो पढ़े पर योग नहीं मिला। काशी गए वहां भी योग की पुस्तकें तो मिली पर योग नहीं

मिला। 15 वर्ष की आयु तक ऐसा ही चलता रहा। माता-पिता की मृत्यु के बाद प्रभु राम लाल जी बिना बताए घर से निकल गए। वह हरिद्वार, उत्तरकाशी, दक्षिण राज्यों की ओर गए पर वहां कोई योग सिखाने वाला नहीं मिला। फिर किसी के बतलाने पर प्रभु जी पूर्व की तरफ गए तो उन्हें ब्रह्मपुत्र नदी के पार जाने को कहा गया। वहां इन्हें नागों ने बलि देने के लिए पकड़ लिया। उस समय प्रभु जी के दो शिष्य भी साथ थे। परन्तु भगवान की बलि कौन दे सकता है। उसी समय वहां एक स्त्री पीड़ा से कराहने लगी। प्रभु जी ने दवाई बनाकर उसे लगाई तो वह एक दम ठीक हो गई। तब कुछ लोग कहने लगे की यह महान व्यक्ति हैं इनको वहीं छोड़कर आओ जहां से पकड़ कर लाए हो। लोगों के लाख रोकने पर भी प्रभु राम लाल जी ब्रह्मपुत्र नदी के पार गए। वहां एक राजा रहता था जो काला जादू जानता था। वह प्रभु जी पर भी जादू करने लगा मगर असफल रहा। तब उसने प्रभु जी को अपने योगी गुरु के बारे में बताया। योगी गुरु के पास जब प्रभु जी पहुंचे तो उसने कहा कि आप तो स्वयं भगवान हैं, मैं आपका

गुरु कैसे बन सकता हूँ। उसने कहा कि आपको नेपाल में गुरु मिलेंगे। वहां एक दिन जंगलों में प्रभु जी सोए हुए थे कि महाप्रभु जी स्वयं आकर आकाश मार्ग से उन्हें कैलाश पर्वत पर ले गए। वहां प्रभु जी ने न केवल योग सीखा बल्कि महान ऋषियों के भी दर्शन किए। तब महाप्रभु जी ने कहा कि आपने योग सीख लिया है अब संसार में जाकर लोगों को बताओ कि योग द्वारा मुक्ति कैसे पाई जा सकती है। तब प्रभु जी ने संसार में आकर लुप्त योग विद्या का पुनरुद्धार किया तथा गृहस्थियों को योग विद्या का ज्ञान दिया। आज उनकी कृपा से विश्व के सभी देशों में योग प्रचलित हो गया है।

❋ ❋ ❋

65. योग करने वाला रोगों से मुक्त रहता है

भगवान की महिमा जितनी गाई जाए कम है। प्रभु रामलाल जी योग का उद्धार उस समय करने आए थे जब हमारी आत्मा, मन व बुद्धि सोए हुए थे और हमारा शरीर रोगों की कैद में जकड़ा हुआ था। हम स्वतन्त्र रूप से कार्य नहीं कर सकते थे। उन्होंने धर्म के उद्धार के साथ-साथ मानवता के उद्धार का रास्ता दिखाया। यह रास्ता योग का था। उन्होंने योग का झंडा बुलंद किया। उस समय योग को हीन भावना से देखा जाता था तथा इसे भीख मंगो की विद्या कह कर पुकारा जाता था। यह उनकी शक्ति ही है कि एक शताब्दी में ही संसार में योग का प्रकाश सब ओर फैल गया है। उन्होंने हमें अह्वान किया कि परतंत्रता की कैद से निकलो। लेकिन हमें आज भी पता नहीं कि हम कौन थे और हमने क्या बनना है? हमारे बुजुर्ग कौन थे? हम कहते हैं कि हमारा सनातन धर्म है। सनातन धर्म का अर्थ है कि जब से सृष्टि बनी है। लेकिन वह कौन थे हमें ज्ञान नहीं है।

उन्होंने हमें शरीर के लिए योग दिया लेकिन हम उससे लाभ नहीं उठाते। हम कहते हैं कि जहां योग है वहां रोग नहीं होते। मगर हम रोग व योग के संबंध को नहीं समझते। हम गुमराह हो जाते हैं व औषधियों की ओर भागते हैं। आराम न आने पर योग की ओर भागते हैं व ठीक होने पर पछताते हैं कि पहले इस ओर क्यों नहीं आए। हम हठयोग सीखने का प्रयास ही नहीं करते। शरीर को संभालना हमारा कर्त्तव्य है। योग करने वाला रोगों से स्वतन्त्र रहता है। स्वतन्त्रता में ही शांति व सुख है। इसके अतिरिक्त हमारे पास मन है जिसके विषय में वेदों में कहा गया है कि यह बहुत दुखदायी है। यह हमें इस जन्म में भी दुखी करता है व परलोक में भी दुखी करता है। यह बहुत शक्तिशाली है। इसलिए यह वश में नहीं आता। इसे सम्भालना है। जहां मन जाता है वहां आत्मा जाती है। मन को काबू करने की शक्ति सद्गुरु के पास होती है। इसलिए हमें गुरु की शरण में जाना चाहिए। जब हम गुरु के पास जाते हैं तो वह हमें एक मंत्र देते हैं। यह मंत्र ही औषधी है। मंत्र का अर्थ है मन

को वश में करने वाला। मंत्र ही सब औषधियों का नाम है। योग दर्शन में कहा गया है कि मंत्र शरीर व मन दोनों के रोगों के लिए है। अगर हमने मंत्र से मन को एकाग्र करना है अथवा अन्य लाभ उठाने हैं तो हमें अपने इष्ट को मन के सामने रखना होगा। मंत्र का निरन्तर अभ्यास करना होगा। संसार से विरक्त रहते हुए वैराग्य का पालन करना होगा।

❋ ❋ ❋

66. ईश्वर से डरने वाला कभी पाप नहीं करता

गुरु अपनी पूजा करवाने नहीं बल्कि लोगों के कल्याण हित संसार में आते हैं। हम उनकी बातें न मान कर उनके बताए मार्ग पर नहीं चलते, जिसके परिणाम स्वरूप हम कमजोर व दु:खी हो जाते हैं। हम भगवान कृष्ण की गीता पढ़ते हैं मगर उनके उपदेशों पर नहीं चलते। राम की रामायण पढ़ते हैं मगर उनकी शिक्षा पर नहीं चलते। जब धर्म की हानि होती है तो समाज में भी कई प्रकार की रुकावटें आ जाती हैं। तब भगवान अवतार लेकर गुरु रूप में आते हैं व समाज का सुधार करते हैं। आज हमारे भीतर शक्ति की कमी है इसलिए हम समाज में व्याप्त दोषों को दूर नहीं कर पा रहे। हमारे समाज में दहेज, रात्रि विवाह, भाषा की गुलामी, छुआछूत, शराब, धोखा व धार्मिक स्थानों का उचित रख रखाव न रखने की बीमारी है। इनका सुधार हमें स्वयं करना होगा। उन गुरुओं पर आश्चर्य होता है जो शिष्य से सेवा लेते हैं मगर उनका सुधार नहीं करते। आज लोग इतने नास्तिक हो चुके हैं कि वह उस ईश्वर पर भी विश्वास

नहीं करते जिसने हमें पैदा किया है। हम ईश्वर से नहीं डरते इसीलिए पाप पर पाप किए जा रहे हैं। ईश्वर से डरने वाला कभी पाप नहीं करता क्योंकि उसे पता होता है कि अधर्म के कार्यों का फल भुगतना पड़ता है। पूजा पाठ करना ही काफी नहीं, हमें भगवान का डर भी होना चाहिए। हम सब अज्ञानी हैं। ज्ञान तो शास्त्रों से मिलता है पर हमें तो शास्त्रों के नाम तक नहीं पता। हमारे शास्त्र तो ज्ञान का महासमुद्र हैं। हम इस समुद्र के पास जाने से भी डरते हैं कि कहीं हम डूब न जाएं। हम बंटे हुए हैं, हमारे में एकता नहीं है। अलग-अलग होने के कारण ही समाज में कई त्रुटियां आ गई हैं। योग द्वारा यम नियमों का पालन करके इन दोषों व त्रुटियों को दूर किया जा सकता है।

* * *

67. ईश्वरीय ऊर्जा का नाम ही प्राण है

शिष्य गुरु के पास आकर ज्ञान प्राप्त करता है तो गुरु उस पर कृपा कर उसकी उलझनों व दोषों को दूर करते हैं। योग में हठयोग व राजयोग के सुमेल को ही सम्पूर्ण योग कहा गया है। हठयोग में षट्कर्म, आसन, प्राणायाम आते हैं। प्राणायाम के बारे में जो ज्ञान प्रभु रामलाल जी ने दिया वह और कहीं नहीं मिलता। प्राण शक्ति को आकर्षित करने का नाम ही प्राणायाम है। प्राण उस ऊर्जा का नाम है जो भगवान की शक्ति है अर्थात ईश्वरीय ऊर्जा का नाम ही प्राण है। वेदों में लिखा है कि सूर्य अगर चमकता है तो वह प्राण शक्ति के कारण ही चमकता है। हम में अगर प्राण शक्ति निकल जाए तो हम निर्जीव हो जाते हैं। प्राण शक्ति हमारे भीतर प्राण नाड़ियों द्वारा आती है। यह प्राण नाड़ियां 72 करोड़ हैं। यह ईश्वरीय ऊर्जा ही हमें जीवित रखती है। इस ऊर्जा को अधिक आकर्षित करने से मनुष्य ईश्वर में ही लीन

हो जाता है। इसे मन द्वारा ही किया जा सकता है क्योंकि मन व प्राणों का गहरा संबंध है। प्रायः लोग प्राण को वायु ही समझ लेते हैं। जबकि वायु को चलाने वाली शक्ति प्राण है। हमारे हृदय को भी प्राण ही चलाते हैं। शास्त्र कहते हैं कि प्राण शक्ति से जब मनुष्य की समाधि लगती है तो श्वास की भी जरूरत नहीं पड़ती। योग की कई मुद्राएं हमारी प्राण शक्ति से संबंध रखती हैं। साधारण प्राणायाम वायु से संबंध रखता है। वैसे प्राणायाम से ही शरीर को स्वस्थ बना सकते हैं। इस प्राणायाम में श्वास भरना, श्वास रोकना व श्वास छोड़ना तीन क्रियाएं होती हैं। इन्हें पूरक, कुम्भक व रेचक भी कहा जाता है। जब हम श्वास भरते हैं तो ज्यादा से ज्यादा शुद्ध हवा अंदर ले जाकर उसे रोकने का प्रयास करते हैं। हवा अंदर फेफड़ों में जाकर अपना काम करती है। शुद्ध वायु रक्त में समा जाती है। अंदर की गर्मी से हवा फैल कर फेफड़ों की शक्ति को बढ़ाती है। फिर हम धीरे-धीरे हवा को बाहर निकालते हैं। जितना समय हम हवा को लेने में लगाते हैं, उससे चार गुना समय

उसे अंदर रोकना चाहिए तथा दो गुने समय में उसे छोड़ना चाहिए। शुरू-शुरू में अनुपात 1: 3: 2 का भी हो सकता है। दोनों नाक छिद्रों से यह क्रिया करने से एक चक्र बनता है। योगी लोग आमतौर पर यही प्राणायाम करते हैं क्योंकि इसमें कोई भी खतरा नहीं होता।

❋ ❋ ❋

68. गुरु समर्पित शिष्य को अपने रंग में रंग देता है

गुरु व शिष्य का अटूट संबंध है। गुरु हमेशा ही शिष्य का कल्याण करते हैं। गुरु विहीन व्यक्ति संसार में भटकता रहता है। गुरु व शिर्ष्य का संबंध धोबी व कपड़े के संबंध के सामान है। जैसे धोबी मैले कपड़े को धोकर साफ कर देता है उसी प्रकार गुरु भी शिष्य के दोषों को दूर कर देता है। गुरु व शिष्य का संबंध रंगरेज का भी है। जिस प्रकार रंगरेज किसी भी वस्त्र को अपने मन चाहे रंग में रंग लेता है उसी प्रकार गुरु भी शिष्य को अपने रंग में रंग लेते हैं। लेकिन इसके लिए जरूरी है कि शिष्य का मन गुरु के प्रति साफ हो क्योंकि किसी भी काले वस्त्र पर कोई रंग नहीं चढ़ता। गुरु व शिष्य का संबंध चंदन व प्लाश के पेड़ के सामान है। चन्दन के पास उगने वाला वृक्ष भी चंदन जैसी सुगंध देने लगता है। उसी प्रकार योगी गुरु के पास रहने वाला शिष्य भी योगमय हो जाता है। प्रभु राम लाल जी हमारे ऊपर योग का रंग चढ़ाना चाहते हैं। हमारा उनसे संबंध अटूट होना

चाहिए तभी वे हमें अपने रंग में रंग सकेंगे। योग आश्रमों में सम्पूर्ण योग की शिक्षा दी जाती है। प्रभु राम लाल जी सौ वर्ष पहले उस समय योग को लेकर आए जब संसार में योग नाम की कोई चीज नहीं थी। आज सारा संसार ये मान रहा है कि योग एक महान विद्या है जो पूरी मानवता के लिए है। हम प्रभु जी को हमेशा स्मरण करें क्योंकि हमें अपना जीवन योग के रंग में रंगना है। हमें यह बात याद रखनी चाहिए कि गुरु का रंग किसी-किसी पर ही चढ़ता है। प्रभु जी जब योग की शिक्षा देते हैं तो वह हमारे शरीर, मन व आत्मा के उद्धार की शिक्षा देते हैं। योग एक समुन्द्र है जिसमें से उन्होंने चुन चुन कर गृहस्थियों को कुछ चीजें दी हैं। आसनों की कोई गिनती नहीं है। लेकिन उन्होंने बताया कि किस प्रकार की अवस्था में हम कौन से पांच-दस आसन कर लाभ उठा सकते हैं। इसी तरह षटकर्मों की संख्या बीस-पच्चीस है लेकिन हम दो तीन ही कर लेते हैं। दस प्रकार के प्राणायामों में से हम केवल नाड़ी शोधन प्राणायाम करके स्वस्थ रह सकते हैं। मुद्राओं के बारे में लोगों को बहुत कम ज्ञान है। मुद्राएं मन को एकाग्र करने व समाधि देने

में सहायक होती हैं। ये अनेकों प्रकार की सिद्धियां भी प्रदान करती हैं। इनकी संख्या 21 है। हम आसन, प्राणायाम, षटकर्म आदि सारा दिन नहीं कर सकते। लेकिन मुद्राएं हम दिन भर कर सकते हैं। योगी सारा दिन योग करता है। केवल मुद्राओं के द्वारा ही हम अपने अन्दर के हारमोनस का लाभ उठा सकते हैं। हम मांडुकी मुद्रा, नभो मुद्रा, अकाशी मुद्रा, उड़ियानबंध, जालंधरबंध, मूलबंध, विपरीतकरी मुद्रा व तड़ागी मुद्रा करके भी समुचित लाभ उठा सकते हैं।

❋ ❋ ❋

69. जिज्ञासा ही ज्ञान की जननी है

सद्गुरु से लाभ उठाने के लिए वैराग्य का अभ्यास आवश्यक है। बिना इसके हम गुरु के उपदेशों को ग्रहण नहीं कर सकते क्योंकि हमारे भीतर जिज्ञासा नहीं होती तथा जिज्ञासु ही सद्गुरु से कुछ प्राप्त कर पाता है। अगर हम संसार से विरक्त न हों तो हम गुरु के उपदेशों पर मनन नहीं कर पायेंगे। जिस किसी ने भी गुरु से कुछ प्राप्त किया वह जिज्ञासु बन कर आया तथा संसार से विरक्त होकर ही कुछ ग्रहण कर सका। जिज्ञासा व वैराग्य का आपस में गहरा संबंध है। जिज्ञासु हमेशा चाहता है कि उसे कुछ प्राप्त हो। वह संसार से कुछ नहीं चाहता। उसे अपनी मंजिल का भी पता नहीं होता लेकिन वह लगातार खोजता रहता है। जिज्ञासु अपनी अवस्था किसी को बतला नहीं सकता। जिज्ञासा को लेकर बड़े-बड़े शास्त्र लिखे गए हैं। गीता में युद्ध के बारे में जो लिखा गया है वह केवल समझाने की बात है। व्यास ने गीता लिखी तो उसके पीछे उसका उद्देश्य था कि जिज्ञासा कैसे व कहां से शांत होगी? व्यास ने गीता

का प्रारंभ ही जिज्ञासा से किया। वहां अर्जुन ऐसी स्थिति में था कि वह पूर्ण रूप से संसार से विरक्त था। गीता कदम-कदम चलते हुए अठारह अध्याय तक पहुंची। गीता के पहले अध्याय को विषाद योग कहते हैं। विषाद योग में मनुष्य की स्थिति ऐसी होती है कि वह पागल भी हो सकता है। अर्जुन कहता है कि मैं युद्ध नहीं करूंगा चाहे सामने वाले मुझे मार दें। वह कहता है कि उसके अंग ढीले हो रहे हैं। मुंह से बात नहीं निकल रही। शरीर कांप रहा है। धनुष हाथ से गिरा जा रहा है। इससे ज्यादा और बुरी अवस्था क्या हो सकती है। विषाद की स्थिति में व्यक्ति विरक्त हो जाता है। न शरीर व न ही मन ठिकाने रहता है। ऐसे में युक्तियों से काम नहीं बनता। काम केवल गुरु द्वारा दी गई वस्तु से ही बनता है। भगवान अर्जुन को कहते हैं कि तुम क्षत्रीय हो, लड़ना तुम्हारा धर्म है व यही तुम्हारा कर्म है। उन्होंने उसे लालच भी दिया कि अगर वह युद्ध में जीत गया तो उसे राज्य मिलेगा अगर मारा गया तो मोक्ष की प्राप्ति होगी। लेकिन अर्जुन लालच में भी नहीं आया। तब भगवान ने उसे ज्ञान दिया कि तुम आत्मा हो। आत्मा न जीती है न

मरती है। फिर भय दिया कि अगर तुम नहीं लड़ोगे भाग जाओगे तो लोग कायर कह कर तुम्हारी निन्दा करेंगे। लेकिन जब ज्ञान, लालच व भय का अर्जुन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा तो भगवान ने देखा कि अर्जुन वास्तव में कुछ प्राप्त करने का अधिकारी है। तब कृष्ण ने कहा कि अर्जुन मेरी ओर देखो। अर्जुन ने देखा तो उसे भगवान के शरीर में सारे देव दिखाई दिए। उसके सारे संशय दूर हो गए। अर्जुन ने कहा भगवान अब मैं तुम्हारा हो गया हूँ। अब जो कहोगे मैं करूंगा। उसकी सारी जिज्ञासायें शान्त हो गई क्योंकि प्यासे आदमी की प्यास पानी से ही बुझती है।

❊ ❊ ❊

70. कर्मयोगी काम तो करता है मगर उसमें लिप्त नहीं होता

योग ही मोक्ष का रास्ता दिखाता है। योग में हमें संसार से विमुक्त होने का अभ्यास करना पड़ता है तथा योगी गुरु की शरण में जाना पड़ता है। तभी हम मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं। केवल धार्मिक ग्रंथ पढ़ने से ही कोई योगी नहीं बन जाता। उसके पास लक्ष्य तथा लक्ष्य दिखाने वाला योगी गुरु होना चाहिए। संसार से विरक्त हो कर गुरु मिल जाने पर हमें उनमें श्रद्धा होनी चाहिए। सच्चा भक्त एक क्षण के लिए भी गुरु से विमुक्त नहीं होता। गीता भी हमें इसी प्रकार योग मार्ग पर लगाती है। इस महान ग्रंथ को व्यास महाराज ने कृष्ण-अर्जुन के संवाद के रूप में लिखा है। गुरु शिष्य को संसार से भाग जाने की बजाय उसे अपने आत्म स्वरूप को देखने को कहते हैं। शरीर व संसार तो नश्वर है। समय आने पर दोनों का अंत निश्चित है। यह नश्वर चीजें हमारे भीतर होती हैं। जिसे हम 'मैं' कहते हैं। जब योगी 'मैं' कहता है तो वह आत्मा की बात करता है। गीता में कृष्ण कहते

हैं कि आत्मा होने के बावजूद हमें कर्म तो करना ही है। कर्मयोगी काम तो करता है मगर उसमें लिप्त नहीं होता। वह कर्म तो करता है परन्तु फल की इच्छा नहीं रखता। कर्म व फल कपड़े के ताने-बाने की तरह एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। इनको अलग नहीं किया जा सकता। लेकिन इच्छा व संकल्प रहित कर्म सन्यास के समान होता है। पाँचवे अध्याय में अर्जुन पूछता है कि सन्यास व कर्म दोनों कैसे हो सकते हैं? इस पर कृष्ण कहते हैं कि जो व्यक्ति संकल्प त्याग कर सब कर्मों को भगवान पर छोड़ देता है वह ऐसा कर सकता है। ऐसा मनुष्य फल से लिप्त नहीं होता। जिनको पूर्ण गुरु मिले हुए हैं वह ऐसा कर सकते हैं। योगी देखते हुए, सुनते हुए, सूंघते हुए, सांस लेते हुए, बोलते हुए, त्याग करते हुए, ग्रहण करते हुए, आंख झपकते हुए, आंख बंद करते हुए भी कुछ नहीं कर रहा होता। वह मानता है कि यह तो उसकी इन्द्रियां कर रही हैं।

* * *

71. भगवान के लिए कर्म करने वाले को मोक्ष मिलता है

गीता का असली नाम योग शास्त्र है जो श्री कृष्ण-अर्जुन के संवाद के रूप में लिखा गया है। इसमें आरम्भ से लेकर अंत तक योग का इतना ज्ञान है जो अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। हर अध्याय का अलग-अलग विषय है। पहले अध्याय को विषाद योग, दूसरे को सांख्य योग, तीसरे को कर्मयोग, चौथे को ज्ञान कर्म सन्यास योग, पांचवे को कर्म सन्यास योग, छठे को आत्मसंयम योग, सातवें को ज्ञान विज्ञान योग, आठवें को अक्षर ब्रह्म योग, नवें को राजविद्या राजगुह्य योग, दसवें को विभूति योग व ग्यारहवें को विश्व रूप दर्शन योग कहा गया है। संसार में विमुक्ति से शुरू होकर गीता ग्यारहवें अध्याय में अर्जुन को भगवान के विराट स्वरूप के दर्शनों तक पहुंचाती है। गीता के 12वें अध्याय में कृष्ण कहते हैं कि अगर तुम भगवान को प्राप्त करना चाहते हो तो तुम्हें भक्ति योग पर चलना होगा। केवल भक्ति द्वारा ही मुझे प्राप्त किया जा सकता है। भक्ति द्वारा ही मुक्ति संभव

है। भक्ति दो प्रकार की होती है। एक वह जो भगवान के निराकार रूप को देखते हैं। दूसरे वह जो भगवान के साकार रूप को देखते हैं। इनमें कौन सी भक्ति श्रेष्ठ है? इस पर कृष्ण कहते हैं जो मन लगाकर हर समय मुझे याद करता है तथा मेरे प्रति श्रद्धा रखता है वह ही मेरा भक्त है। जो मुझे निराकार समझते हैं, जिसका कोई ठिकाना नहीं है, जिसे व्यक्त नहीं किया जा सकता, जो सर्वव्यापक है, जिसके बारे में सोचा भी नहीं जा सकता, ऐसे की उपासना करने के लिए सारी इन्द्रियों को काबू में लाना होगा तथा ऐसा कर पाने वाला भी मुझे प्राप्त कर सकता है। मेरे विचार में भगवान को अव्यक्त रूप से देखने का रास्ता मुश्किल है। इस तक पहुंचना, उसे छू कर देखना मुश्किल है। इसीलिए यह आमतौर पर कहा जाता है कि भगवान के मुकाबले गुरु शिष्य के अधिक नजदीक होते हैं। उन्हें छू कर देखा जा सकता है, उनसे बात की जा सकती है, उनके साक्षात दर्शन किए जा सकते हैं। भगवान के बारे में यह सब चीजें मुश्किल दिखाई देती हैं। शरीरधारी मनुष्य ऐसा कम ही

कर पाते हैं। भगवान कहते हैं कि मेरे में अगर चित्त नहीं लगा पाते तो निरन्तर अभ्यास करो। अभ्यास से ही हर चीज़ संभव है। अगर अभ्यास भी नहीं कर सकते तो मेरे लिए कर्म करो, मेरी सेवा करो, मेरे कर्म में लग जाओ। मेरे लिए कर्म करते करते तुम्हें मोक्ष मिल जाएगा। अगर कर्म करने की भी हिम्मत नहीं है तो सब कर्मों का फल त्याग दो व निष्काम कर्म करो। अपने आप को संयम में लाओ। अपने आप को भगवान के अर्पण कर दो। तभी आप भगवान की सच्ची भक्ति कर सकोगे। केवल दिखावटी भक्ति करने से भगवान प्रसन्न नहीं होते।

❊ ❊ ❊

72. शरीर, मन व बुद्धि को प्रशिक्षित किए बिना मोक्ष की प्राप्ति असंभव

शास्त्र पढ़ने पर हमें अपने महापुरुषों के जीवन के बारे में पता चलता है और उसका अनुसरण करने में हमें सहायता मिलती है। महापुरुषों का जीवन वैराग्य से आरम्भ होता है। जीवन मुक्ति के लिए है क्योंकि संसार में सदा किसी ने नहीं रहना। इसीलिए महापुरुष हमेशा ही ज्ञान की खोज में रहते हैं। योग वशिष्ट राम के वैराग्य से लिखी गई जबकि व्यास ने गीता इस बात पर लिखी कि अर्जुन को संसार अच्छा नहीं लगता था। हमें भी संसार में रहते हुए घर से मोह नहीं होना चाहिए। अगर घर से मोह होगा तो हमारा ध्यान घर की ओर ही लगा रहेगा। घर से मोह को दूर करने के लिए गुरु की खोज करनी चाहिए। जिनको अच्छा गुरु मिल जाता है वह भवसागर से पार हो जाते हैं। गुरु बताता है कि तुम्हें शरीर व संसार से तो गलानि है मगर अपने अंदर बैठी आत्मा का बोध नहीं है इसलिए अन्तर्मुखी हो जाओ व अपने भीतर देखो। आज हम एक शरीर में हैं तो कल

किसी और में चले जाएंगे। लेकिन आत्मा तो ज्ञान है जो कभी नहीं बदलता। हमें शरीर मिला है तो शरीर के कर्म भी करने चाहिएं। जब हम कर्म करते हैं तो फल की इच्छा भी पनपती है। फल अच्छा होगा तो उससे हमारे भीतर अहंकार आ जाएगा। इसीलिए भगवान कहते हैं कि कर्म करते रहो मगर फल से विरक्त रहो। लेकिन कर्म के फल का त्याग करना आसान नहीं है। कर्म व फल के साथ हमारी इच्छा जुड़ी रहती है। इसीलिए कर्म व फल को अलग करना होगा। हमें कर्म में सन्यास करना होगा। केवल अपने को आत्मा मान लेने से ही मुक्ति नहीं हो जाती। हमें संयम भी करना पड़ता है। शरीर, मन व बुद्धि को जब तक हम प्रशिक्षित नहीं करेंगे तब तक मोक्ष की प्राप्ति न होगी। सर्दी-गर्मी व सुख-दुख आदि में हमें समान रहना चाहिए। योगी ज्ञान से अपने आप को संयमित रखता है। वह अपने को अर्न्तात्मा में स्थिर रखता है। हमें योग का दिखावा न करके इसे एकांत में करना चाहिए। अपने आस-पास आराम और सुविधा को ध्यान में रखते हुए अनावश्यक चीजों को इकट्ठा नहीं करना चाहिए। इन्द्रियों व चित्त की क्रियाओं

को काबू करना चाहिए। अगर इन्द्रियां अपना काम अपनी मनमर्जी से करती रहेंगी तो मन काबू में कैसे आएगा? हमने मन को अन्तर्मुखी करना है ताकि वह अंदर अपना स्वरूप देख सके। आत्म संयम में हमें अपने खान-पान को भी संयमित करना पड़ता है। बहुत अधिक खाने वाला अथवा बिल्कुल भूखा रहने वाला योगी नहीं बन सकता। हमें अपनी दिनचर्या को नियमित करना चाहिए क्योंकि जिसकी दिनचर्या ठीक नहीं होगी वह अपने आप को आत्म संयमित नहीं कर सकेगा।

❊ ❊ ❊

73. कल्याण के लिए मन का निग्रह आवश्यक

राजयोग द्वारा मन को प्रबल बनाया जा सकता है क्योंकि मन की दुर्बलता के रहते कुछ भी प्राप्त नहीं किया जा सकता। जिस प्रकार संसार में अनेक वस्तुएं हैं मगर उन सब को हम एक साथ ग्रहण नहीं कर सकते ठीक उसी प्रकार परमात्मा के अनेकों रूपों को मन में एक साथ धारण नहीं किया जा सकता। हमें एक इष्ट की अराधना करने से ही मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है। इसके लिए मन की वृतियों पर काबू पाना होगा। शरीर तो इसी जन्म में साथ रहना है लेकिन मन अगले जन्म में भी साथ जाता है। मन नींद में भी विचार करता रहता है। इसमें कई विचार आते हैं। यह नई-नई रचनाएं करता है जिनमें से कुछ साकार होती हैं कुछ नहीं। इससे छुटकारा पाने के लिए हमें कलिष्ट व अकलिष्ट वृतियों का निग्रह करना होगा। कलिष्ट वृतियां आसुरी हैं। अगर हम इनका मुकाबला नहीं करेंगे तो हमारा पतन हो जाएगा। अकलिष्ट वृतियां हमें भवसागर से पार होने में सहायक होती हैं। यह दोनों वृतियां हमारे अंदर होती हैं। आसुरी वृति में धोखा व अहंकार प्रमुख हैं। जिनके अंदर

आसुरी वृति है समझो वह निर्दयी असुर है, अज्ञानी है क्योंकि ज्ञानी कभी धोखा व अहंकार नहीं करता। वह इस के दूरगामी परिणाम को जानता है। अहिंसा, दया, सत्य, अक्रोध, क्षमा व त्याग अकलिष्ट वृतियां हैं। हमारे अंदर दोनों प्रकार की वृतियों का संघर्ष चलता रहता है। शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर प्रणिधान आदि नियम योग के अंदर मन के लिए ही हैं। हमारा मन शुद्ध होगा तभी भक्ति पर लगेगा। भक्ति दिखावट की चीज नहीं है। जो भक्ति बाहर दिखाई दे उसका कोई लाभ नहीं बल्कि उससे अहंकार पैदा होता है। भक्ति का नाता केवल भगवान से है। किताबी ज्ञान से लाभ नहीं होता। भगवान की भक्ति करने से ज्ञान अंदर से उपजता है। ज्ञान से ही मुक्ति मिलती है। योग बतलाता है कि अगर आपका मन एक क्षण के लिए भी परमात्मा में लग जाता है तो आपको अश्वमेघ यज्ञ का फल देगा। यह सब बातें गुरु के पास जाकर ही प्राप्त होती हैं। गुरु के चरणों में चारों धामों का पुण्य होता है। योग व योगी गुरु के बिना सारे तीर्थ अधूरे हैं। योग के बिना सुख की प्राप्ति नहीं हो सकती। योगी सुख-दुख, सुविधा-असुविधा हर हालत में एक जैसा रहता है।

* * *

74. ईश्वर प्राप्ति के लिए मन, बुद्धि व इन्द्रियों का संयम आवश्यक

जो हर वक्त भगवान के गुण गाता है वही भक्त है और बिना गुरु के पास जाए किसी को कुछ प्राप्त नहीं होता। जब तक आप गुरु के पास जाकर उनसे अपनी शंकाओं का निवारण नहीं करते उपदेश भी काम नहीं आएगा। शास्त्रों को समुद्र कहा गया है। ग्रंथों का कोई अंत नहीं है। हमारे पास बहुत बड़ा साहित्य है। यह सभी ग्रंथ ज्ञान के समुद्र हैं। समुद्र का पानी खारा होता है। गुरु बादल समान है, जो खारे समुद्र से पानी खींच कर ऊपर लाता है व अपने शिष्यों की प्यास बुझाता है। समुद्र व बादल में जो संबंध है वही संबंध ज्ञान व गुरु में है। गुरु के बिना कोई भवसागर पार नहीं उतर सकता। योग के ग्रंथों में कहा गया है कि यमनियमों का पालन करो। गीता कहती है कि इन्द्रियों को वश में करो। यह बहुत प्रबल हैं, हमारे काबू में नहीं आतीं। अगर यह हम पर

हावी रहेंगी तो योग कैसे होगा। भगवान कहते हैं कि अपनी दिनचर्या ठीक करो, जो ऐसा करते हैं, वही भक्ति के मार्ग पर आगे निकलते हैं। हमारी स्पर्श इन्द्री, रसना, आंख कुछ भी काबू में नहीं हैं। इन को काबू करने पर ही हम मन तक पहुंच सकते हैं। मन तो इन्द्रियों से भी ज्यादा प्रबल है। इसे रोकना आसान नहीं है। योग एक जन्म का काम नहीं है। भगवान गीता में कहते हैं कि मैं संसार में स्वयं आता हूँ, मुझे कोई पैदा नहीं करता। मैं स्वयं ही संसार से चला जाता हूँ। लेकिन हम लोगों को तो इन्द्रियों को और मन को वश में करना पड़ेगा। मन को खराब होते तो देर लगेगी लेकिन बुद्धि को खराब होते देर नहीं लगेगी। जो काम बुद्धि कर सकती है, वह मन नहीं कर सकता। जिसकी बुद्धि वश में आ जाती है उसको स्थिर बुद्धि कहते हैं। बुद्धि ही परमात्मा को जान सकती है। ऐसा व्यक्ति भगवान को देखता है। बुद्धि ज्ञान को प्राप्त करने वाला एजेंट है। अगर बुद्धि वश में नहीं होगी तो ज्ञान की प्राप्ति नहीं होगी। अर्जुन पूछता है कि भगवान यह कैसे पता चलेगा कि बुद्धि स्थिर हो गई है।

भगवान कहते हैं कि जो इस स्थिति में पहुच जाता है, उसे भगवान से प्रत्यक्ष ज्ञान मिलता है। उसकी कामनाएं समाप्त हो जाती हैं। वह अपनी आत्मा के अंदर केंद्रित रहता है। शरीर में सुख दुख आने से वह विचलित नहीं होता। राग, भय व क्रोध उसमें नहीं समाते। उसे शुभ-अशुभ की चिंता नहीं होती। उसकी इन्द्रियां कछुए की तरह होती हैं। जब चाहे अंदर ले जाता है। वह विषयों से निवृत होता है। ऐसा व्यक्ति ही परमात्मा का साक्षातकारी होता है। हमें भी प्रयास करना चाहिए कि हम भी मन, बुद्धि को वश में करके भक्ति के मार्ग पर आगे बढ़ें।

❊ ❊ ❊

75. ध्यान के लिए आयुभर अभ्यास करना पड़ता है

प्राणायाम द्वारा भक्ति व ज्ञान का वर्णन गीता के छठे अध्याय में विस्तार पूर्वक मिलता है। योग की मुद्राओं द्वारा भी हम समाधि की अवस्था तक पहुंच सकते हैं। मूलबंध, जालंधरबंध व उडियानबंध लगाकर हम ध्यान के लिए सीधे बैठ सकते हैं। यह तीनों बंध लगाने से मन अर्न्तमुखी हो जाता है। भगवान की भक्ति भी हम ने अपने भीतर करनी है। बाहरी मन्दिर तो केवल हमारी सहायता के लिए होता है। इसमें प्राणों के अंदर मन को जोड़ना होता है। प्राणों से यहां अभिप्राय प्राण नाड़ियों से है। जब प्राण नाड़ियों से मन जुड़ जायेगा तो ध्यान लगना भी शुरू हो जायेगा। योगी लोग इसी प्रकार ध्यान लगाकर मन को एकाग्र करते हैं। प्राण नाड़ियों के छः केंद्र हैं इनमें छः चक्र हैं। योगी किसी एक केंद्र में मन को एकाग्र करते हैं। मन का संबंध भगवान व प्राणों से है। माया से संबंध हमने अपने-आप ही जोड़ लिया है।

भगवान ने जब शरीर बनाया है तो केंद्र में ध्यान लगाना चाहिए। ध्यान लगाना एक दीर्घ कालीन प्रक्रिया है। कई बार कई-कई वर्षों के अभ्यास के बाद ध्यान लगता है। इसका निरन्तर अभ्यास किया जाना आवश्यक है। जब प्राण नाड़ियों में ध्यान लगने लगता है तो हमें विशेष प्रयास नहीं करना पड़ता। जिस प्रकार हम बिना प्रयास किए ही सांस लेते रहते हैं उसी प्रकार हमारे भीतर भगवान का स्मरण तथा उसका ध्यान संसारिक कार्य करते हुए भी चलता रहता है। अगर भक्ति द्वारा ध्यान लगाना है तो उसके लिए इसके विज्ञान को समझना होगा। हम ने जिसमें मन को एकाग्र करना है वह हमारा इष्ट होना चाहिए जोकि अंत तक रहना चाहिए। जो लोग इष्ट को बीच में बदल देते हैं वह भटक जाते हैं। ध्यान के लिए आयुभर अभ्यास करना पड़ता है। यह एक दीर्घ कालीन व निरन्तर प्रक्रिया है। इसमें हमारी इष्ट के प्रति ऐसी श्रद्धा होनी चाहिए कि कोई हमें गिरा न सके। चाहे हमारी जान चली जाए मगर इष्ट नहीं बदलना चाहिए। हमारी संगति भी इष्ट के अनुसार होनी चाहिए

क्योंकि संगत का असर मन पर होता है। बुद्धि को इष्ट में लगाने के लिए स्वाध्याय करना चाहिए। केवल उन्हीं शास्त्रों को पढ़ना चाहिए जिसमें आप के इष्ट की महिमा का वर्णन हो। जिस गुरु ने आप को शिक्षा दी हो उसकी सेवा व संगत करने से भक्ति अपने-आप बढ़ती है व मन एकाग्र हो जाता है।

76. मन की साधना दिन भर करनी पड़ती है

एक चींटी से लेकर ब्रह्मा तक सब सुख चाहते हैं। कोई दुख नहीं चाहता लेकिन आज हमारा जीवन सुखी नहीं है। हम शरीर व मन से दुखी हैं तथा बुद्धि से परेशान हैं। हम इसे ठीक करने का प्रयास तो करते हैं लेकिन यह प्रयास उचित ढंग से नहीं किया जाता। तीन कर्मों को अपनाने से सुख मिल सकता है। अगर हम योग के षटकर्मों को लगन से करें तो शायद हमारे शरीर को कभी कोई रोग न आए। षटकर्म करने वाले को कभी रोग नहीं होता। षटकर्म से शरीर के अंदर में मल का शोधन होता है। शास्त्र कहते हैं कि रोग हमें अंदर के मल से आते हैं। मल जब कुपित हो जाता है तो यह रोग पैदा करता है। नेति, धौंती, नौली, त्राटक, कपालभाति व बस्ति आदि छः षटकर्म हैं। इन्हें करना कोई मुश्किल काम नहीं है। हम दूसरों को साधन करते देखते हैं तथा सुनते हैं मगर करते नहीं। अगर हम छः षट्कर्मों में से

कोई दो भी कर लें तो भी लाभ हो जाता है। काम, क्रोध, मोह, लोभ व अहंकार आदि मन से संबंधित चीजें हैं। हम इन्हें वश में तो करना चाहते हैं लेकिन यह आसान कार्य नहीं है। योग में इनका उपचार कर्मयोग बताया गया है। गीता में भगवान कहते हैं कि तुम कर्म करते जाओ और फल की इच्छा मत करो। अगर हम फल के बारे में विचार नहीं करेंगे तो रागद्वेष पैदा ही नहीं होगा। हम कर्मों का फल भगवान पर छोड़ेंगे तो मानसिक बिमारियां अपने आप समाप्त हो जायेंगी। कर्मयोग मन की साधना है। शरीर की साधना तो कुछ समय में ही हो जाती है पर मन की साधना दिन भर करनी पड़ती है। मन में तो विचार चलते ही रहते हैं। कर्मयोगी तो संसार में विरले ही मिलेंगे। नेति, धौती आसन करते तो पता चलेगा मगर मन की साधना करते तो किसी को पता ही नहीं चलेगा। यह तो केवल आत्मा को ही पता होगा। कर्म को छोड़ा नहीं जा सकता लेकिन चिपट कर कर्म मत करें। अपने को कर्मों से अनासक्त रखें। ऐसा करने वाले को मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है। बुद्धि के बारे में

गीता में कहा गया है कि मन कहता है कि मैं कार्य करता हूँ जबकि काम तो प्रकृति करती है। गीता कहती है कि आत्मा न खाती है, न सुनती है। जब सब काम इन्द्रियां करती हैं तो हमें यह समझना चाहिए कि सारा काम प्रकृति द्वारा हो रहा है। आत्मा कहती है कि मैं कर्म नहीं करती उसने तो कर्मों को त्याग दिया है। जो इन बातों को समझ जाता है वह भगवान के नजदीक चला जाता है।

❊ ❊ ❊

77. योगी कर्मों से परखा जाता है

हम सबको चित्त लगाकर योग करना चाहिए। कोई ऐसा शास्त्र नहीं है जिसमें योग का संदेश नहीं दिया गया है। कोई ऐसा ऋषि नहीं जिसने योग न किया हो। हमारा दुर्भाग्य है कि हम गुलामी में यह सब बातें भूलकर आक्रमणकारियों की बातें याद रखने लगे। महाविद्वान गीता का उपदेश देते हैं मगर हमारे हाथों में आज तक गीता नहीं पहुंची। गीता को सब मानते हैं मगर पढ़ते नहीं। प्रभु राम लाल जी ने तो केवल योग बतलाया। जब हम जड़ को पकड़ लें तो किसी अन्य चीज की जरूरत नहीं पड़ती। जहां योग नहीं होता वहां रोग घेरा डाल लेते हैं। योग द्वारा असाध्य रोगों का भी ईलाज किया जाता है। हर ओर से निराश लोगों को भी योग से लाभ होता है। यह किसी व्यक्ति की नहीं बल्कि योग विद्या की करामात है। योग हमारे सम्पूर्ण विकास के लिए है। ऐसी कोई अन्य विद्या नहीं है। योगी इस जन्म में भी सुखी है, वह आगे भी मुक्त हो जायेगा। कोई दूसरा व्यक्ति जो

संसार में सुखी है वह आगे के बारे में ऐसा दावा नहीं कर सकता। भगवान कृष्ण ने भी यही कहा था कि योग से बड़ी विद्या नहीं है। गीता को योग शास्त्र कहा जाता है। इसमें भगवान कहते हैं कि अर्जुन योगी बनो, बाकी सब चीजें झूठी हैं। जो तपस्या करते हैं वे बुरा काम तो नहीं करते। लेकिन योग तपस्या से भी ऊपर है। जो कर्मकाण्ड करते हैं, जो ज्ञानी हैं उनसे भी योगी बड़ा है। योग सीधा आत्मा का कल्याण करता है। जो लोग तपस्या करते हैं उनके आगे सांसारिक उद्देश्य होता है। योग करने वालों के सामने कोई सांसारिक उद्देश्य नहीं होता। वे तो केवल अपनी आत्मा को देखते हैं। आत्मा को देखना परमात्मा को देखने के समान है। तपस्वी दर्शन के लिए यज्ञ नहीं करते। लेकिन योगी अपने मन को एकाग्र करके अपनी आत्मा के दर्शन करता है। हमें योग करना गीता में बताया गया है। योग साधना शरीर और मन दोनों के लिये है। शरीर के लिये हठ योग है व मन के लिए राजयोग। गीता कहती है कि योगी जो भी काम करेगा वह उसमें लिप्त नहीं होगा। कर्म योग की

कसौटी है। योगी कर्मों से परखा जाता है। हमें योगानुकूल जीवन व्यतीत करना चाहिए। अमीरी-गरीबी, भूख-प्यास, स्वास्थ्य-रोग में भी योगी सम रहता है क्योंकि उसके हृदय में शांति है। योग भी इस प्रकार करो कि किसी को पता ही न चले कि हम योग कर रहे हैं। भक्त और भगवान का नाता तो सबसे अधिक गुप्त है, अगर यह नाता खुल गया तो रहस्य क्या रह जायेगा।

78. आसुरी स्वभाव वाले भगवान को नहीं मानते

जब संसार में मर्यादाओं का उल्लंघन होता है तो उस समय भगवान संसार में आते हैं तथा अपने जीवन से मर्यादाओं को स्थापित करते हैं। भगवान ने संसार में आसुरी व दैवी स्वभाव बनाए हैं लेकिन जब आसुरी शक्तियां बढ़ जाती हैं तो भगवान संतुलन स्थापित करने हेतु अवतार लेते हैं। भगवान हमेशा देवताओं के पक्ष में रहते हैं। देवासुर संग्राम में देवताओं की विजय हुई तो राम रावण युद्ध में सच्चाई की जीत हुई। आज संसार में आसुरी शक्तियां पुनः बढ़ गई हैं। इसीलिए संसार में दैवी शक्तियों का पक्ष लेने के लिए प्रभु आए हैं। हमने उनका साथ देना है। मनुष्य वही है जो अच्छे गुणों को ग्रहण करे। इन्हीं गुणों द्वारा हम दैवी स्वभाव के बन सकते हैं। हमारा मन शुद्ध होना चाहिए, हमें स्वाध्यायशील, तपस्वी, अहिंसावादी, सत्यवादी होना चाहिए। इसके साथ-साथ हममें त्याग, क्षमा व शुद्धता की भावना होनी चाहिए। ऐसे लोगों को ही मुक्ति प्राप्त होती है। आसुरी प्रवृतियां बंधन का कारण हैं। जो गलत मार्ग पर चलते हैं, उनमें

जन्म-जन्म के आसुरी गुण होते हैं। आज संसार में शुद्धता, आचार, व्यवहार और सच्चाई का नाम लुप्त होता जा रहा है। आसुरी प्रवृति वाले मन मर्जी करते हैं। वह शास्त्रों के अनुसार कार्य नहीं करते। वह चरित्र निर्माण पर भी ध्यान नहीं देते, सच्चाई का तो आज नामोनिशान मिट गया है। आसुरी प्रवृति वाले असत्य के सहारे मौज तो लेते हैं लेकिन अंत में यही असत्य उनका नाश कर देता है। वे भगवान से भी नहीं डरते। वे कहते हैं कि भगवान कौन है? लोग गीता पर हाथ रख कर भी झूठ बोलने से संकोच नहीं करते। वह ईश्वर को भूल कर काम करते हैं। उन्हें ईश्वर के दण्ड से डर नहीं लगता। उग्रवाद आज दुनिया का स्वभाव बन चुका है इसीलिए मानव जीवन खतरे में है। यह सब आसुरी स्वभाव के कारण ही है। छोटी सी बात पर आदमी आदमी को मारने से नहीं डरता। कामनाएं इतनी बढ़ गई हैं कि पूरी नहीं की जा सकतीं। आसुरी प्रवृति वालों का काम धोखा देना व मस्ती में रहना है। उनके सब कर्म अशुद्ध होते हैं। वह यज्ञ भी किसी को नुकसान पहुंचाने के लिए करते हैं। वह दूसरों को परेशान करते हैं, इसीलिए स्वयं भी शांति से नहीं रहते। काम व भोग ही

उनके जीवन का लक्ष्य है। जैसे मकड़ी के आस-पास जाला बना हुआ होता है, ऐसे ही वह आशाओं के जाल में बंधे रहते हैं। उनके अंदर काम, क्रोध भरा रहता है। यह दोनों रजोगुण से पैदा होते हैं। आसुरी स्वभाव वाले भगवान को नहीं मानते। शरीर आत्मा की नौका है। आसुरी स्वभाव वाले की नौका भवसागर से पार नहीं उतरती। यह लोग भटकते रहते हैं। यह ऐसे लोकों में पड़े रहते हैं जहां सूर्य भी नहीं पहुंचता तथा अंधेरा ही अंधेरा रहता है। इन सब बातों को देखकर हमने स्वयं तय करना है कि हमने आसुरी प्रवृति वाले बनना है अथवा दैवी स्वभाव वाले।

❊ ❊ ❊

79. चिन्ताएं, विचार व मन का भटकना ही मानसिक रोग है

आज संसार आदि व व्याधि से पीड़ित है, जिसका ईलाज किसी के पास नहीं है। आदि का अर्थ है-मन का रोग और व्याधि का अर्थ है-शरीर का रोग। आज संसार का हर प्राणी मन व शरीर के रोगों से पीड़ित है। व्याधियां औषधियों से दूर होती रही हैं। हनुमान जी भी संजीवनी बूटी लाए थे। हमारे देश में चरक व सुषेण हुए। संसार में औषधियों का भंडार है। लेकिन इनके होते हुए भी कोई संसार के सब रोगों को दूर नहीं कर सकता। प्रभु रामलाल जी संसार में हठयोग के साधन लाए हैं, जिनसे मनुष्य अपने स्वस्थ रहने की कला सीख पाया। यह उनका महान उपकार है। उन्होंने आकर लुप्त योग को प्रकट किया। आज संसार इसे मान रहा है व उसका कल्याण हो रहा है। शरीर के रोगों से भी अधिक संसार मन के रोगों से दु:खी है। इसका ईलाज किसी के पास नहीं। आदि अर्थात् मन के दु:ख किसी औषधि से

ठीक नहीं होते। प्रभु जी ने इसके लिए संसार को राजयोग दिया जिसके निरन्तर अभ्यास से हम संसार की चिन्ताओं एवं मानसिक दु:खों से बच सकते हैं। मन जब यम व नियम के मार्ग पर चलते हुए शुद्ध हो जाता है तो उसे प्रभु में लीन कर देने से हमारे मन को शांति मिल जाती है।

❋ ❋ ❋

80. संसार से बांध कर रखते हैं तीनों गुण

पतंजलि ऋषि का योग दर्शन व महर्षि व्यास की भगवद्गीता राजयोग के दो मुख्य ग्रन्थ हैं। दोनों ही मानव की मुक्ति का मार्ग बतलाते हैं। गीता में भगवान कहते हैं कि तप स्वाध्याय व भक्ति द्वारा मोक्ष प्राप्त हो सकता है। भक्ति करने से ईश्वर के दर्शन भी संभव हैं। अगर ईश्वर को मिलना चाहते हो तो उस जैसा बनने का प्रयास करो। तुम अपने आप ही ईश्वर में समा जाओगे। परमात्मा तो त्रिगुणातीत है। ईश्वर प्रकृति से पैदा हुए सतो, रजो व तमो गुणों में बंधा हुआ नहीं है जबकि हम तीनों से बंधे हुए हैं। यह तीनों गुण ही आत्मा को शरीर में बांध कर रखते हैं। इनसे मुक्त होने के लिए पहले तो हमारे अन्दर जिज्ञासा का होना जरूरी है। फिर एक गुरु चाहिए जो इससे मुक्ति दिलाने की शक्ति रखता हो। आज मुक्ति दिलाने वाला गुरु व मुक्ति चाहने वाले शिष्य कम ही हैं। सत्य एक सतो गुण है व निर्मल है। यह दिखाई नहीं देता। यह प्रकाश ही प्रकाश है। इससे मिलने वाला सुख व ज्ञान भी हमें बांधता है। रजो गुण

संबंधी कहा गया है कि संसार के साथ अनुराग व प्रेम हमें इससे बांध कर रखता है। लोग मरते समय भी कहते हैं कि मेरे बेटे को बुलाओ तभी प्राण त्यागूंगा। लालच, तृष्णा व कर्म के द्वारा भी हम रजो गुण से बंधते हैं। तमो गुण संबंधी कहा गया है कि यह अज्ञान से पैदा होता है। हमें आशंका रहती है कि हमें मुक्ति मिलनी भी है या नहीं। मोह में हमें कुछ पता नहीं चलता। निद्रा, प्रमाद व आलस भी हमें इससे बांध कर रखता है। हम आज का काम कल पर छोड़ देते हैं। सतो गुण से लेकर तमो गुण तक हर चीज हमें बांध कर रखती है। इसीलिए हम ईश्वर जैसे नहीं बन पाते। सतो गुण वाले का जन्म ऊंचा होता है, रजोगुण वाले का जन्म बीच की अवस्था में व तमो गुण वाले का नीचे वाले स्थान पर हो सकता है। इसीलिए कहते हैं कि इन तीनों गुणों से मनुष्य जब ऊपर उठ जाता है तो जन्म, मरण, दुख आदि से छूट कर वह अमर हो जाता है। लेकिन दुख की बात है कि हम भगवान से मुक्ति के स्थान पर अन्य सांसारिक चीजें मांगते रहते हैं। गीता में अर्जुन भगवान से प्रश्न करता है कि मनुष्य को यह कैसे पता चलेगा कि वह इन तीन

गुणों से ऊपर उठ गया है कि नहीं। इस पर भगवान कहते हैं कि ऐसा व्यक्ति मान-अपमान, दु:ख-सुख में एक जैसा रहता है। वह न अच्छा चाहता है न बुरा। मित्र व शत्रु के साथ एक जैसा व्यवहार करता है। उसे स्थिर प्रज्ञ कहा जाता है वह सब कामों से अपने आप को मुक्त समझता है। वह मनुष्य ब्रह्मलीन हो जाता है। लेकिन ऐसा केवल अनन्य भक्ति एवं गुरु कृपा द्वारा ही संभव है।

❋ ❋ ❋

81. धर्म पर विश्वास रखने वाले को कोई डगमगा नहीं सकता

हम लोग शास्त्रों का अध्ययन नहीं करते इसलिए हममें ज्ञान की कमी है। हमारे पास ज्ञान का भंडार होने के बावजूद भी हम उसका लाभ नहीं उठाते। हम उस भूमि के समान हैं जिसमें बीज ही नहीं डाला गया। हममें भक्ति का बीज नहीं डाला गया तो हम ज्ञान को कैसे समझ पाएंगे। आज से पहले हमारे जो महापुरुष हुए उन्हें धर्म का पाठ पढ़ाया गया था। शंकराचार्य जी को भी धर्म पढ़ाया गया था। अगर वह न होते तो हिन्दू धर्म की हालत बहुत खराब होती। 31 वर्ष की आयु में तो उन्होंने शरीर भी छोड़ दिया था। उनके सामने कोई शास्त्रार्थ नहीं कर सकता था। उनके बाद राजा राम मोहन राय, लाला लाजपत राय, महात्मा गांधी आदि पैदा हुए जिनमें धर्म का ज्ञान था। लेकिन जब उनके बाद मैकाले आया तो उसने अंग्रेजी भाषा का बीज डाल दिया। वही बीज आज सारे संसार में फैल गया है। आज हमारे समाज की दशा

ऐसी है कि बच्चों में भाषा के प्रति आस्था, देश के प्रति प्रेम व धर्म के प्रति विश्वास कम हो रहा है। धर्म पर दृढ़ विश्वास ही किसी की शक्ति होती है। वीर हकीकत राय ने धर्म के प्रति विश्वास के चलते ही धर्म परिवर्तन करने से इंकार कर दिया था। आज देश में धर्म परिवर्तन के लिए कुछ लोग दूसरों को लालच देते हैं। जो लोग अपने धर्म पर विश्वास रखते हैं उन्हें कोई भी डगमगा नहीं सकता। हमें अपने बच्चों को धर्म के मार्ग पर चलाना चाहिए। उन्हें अपने शास्त्रों को पढ़ने की आदत डालनी चाहिए तभी उनका धर्म पर विश्वास पक्का होगा।

❊ ❊ ❊

82. अगर हम धर्म को नष्ट करेंगे तो धर्म हमें नष्ट कर देगा

धर्म व योग एक ही बात है। मनु महाराज के दस नियम योग के यम व नियम में हैं। भगवान धर्म के स्वयं रखवाले हैं। अगर हम धर्म की रक्षा नहीं करेंगे तो धर्म भी हमारी रक्षा नहीं करेगा। शास्त्रों के अंदर बहुत कुछ समझाया गया है। भगवान शिव की तस्वीर बना कर बताया गया है कि योग का स्वरूप कैसा होता है। योगी के मस्तिष्क में उजाला व चन्द्रमा ज्ञान का प्रतीक है। योगी सबका भला चाहता है। शंकर भगवान के सिर से निकल रही गंगा को शिव संकल्प कहते हैं। शिव को अलंकारी बताया गया है। कहा जाता है कि एक बैल है जो धर्म का स्वरूप है, उसके सिर पर दो सींग हैं, जिस पर दुनिया खड़ी है। अगर वह बैल हिल जाए तो दुनिया हिल जाएगी। दो सींगों में से एक योग के यम का पहला भाग अहिंसा है व दूसरा नियम का पहला भाग शौच है। यह इतने महत्व के हैं कि अगर हिलें तो संसार में तबाही

आ सकती है। आज अहिंसा का सींग हिल गया तो मनुष्य मनुष्य को मारने लग पड़े हैं। सैकड़ों लोग हर रोज मारे जा रहे हैं। यह सींग दिन प्रतिदिन टेढ़ा हो रहा है। इसलिए हत्याएं बढ़ रही हैं। अगर यह सींग टूट गया तो सर्वनाश हो जाएगा क्योंकि अहिंसा समाप्त हो जाएगी। संसार में सैंकड़ों हिरोशिमा बनेंगे। दस-दस मील पर एक दीपक जलता दिखाई देगा। इसलिए कहा गया है कि अगर हम धर्म को नष्ट करेंगे तो धर्म हमें नष्ट कर देगा। हम अहिंसा परमोधर्म कहते हैं। अगर धर्म ही खत्म हो जाएगा तो कुछ नहीं बचेगा। दूसरा नियम शौच का है। शौच की लापरवाही भी तबाही मचा देती है। प्रदूषण के कारण बहुत से लोग आज बिमारी की चपेट में आ रहे हैं। योग दर्शन में लिखा है कि शौच से लोक व परलोक दोनों सुधरते हैं लेकिन हमने शौच को छुआ छूत में बदल दिया है। शौच का अर्थ उल्टा करने से हमारा समाज उल्टा हो गया है। शौच छुआ छूत नहीं है, यह तो मन व बुद्धि से संबंध रखता है। शौच के सात गुण बताए गए हैं, इससे हमारा शरीर सुरक्षित रहता है। हठयोग के

षटकर्म शुद्धि के लिए हैं। जो इसे ठीक तरीके से करता है उसे कोई रोग नहीं लगता। शौच से बाहरी संक्रमण नहीं लगता। इससे शरीर बाहर से लगने वाली बिमारियों से बचा रहता है। हमने मन की शुद्धि का भी ध्यान रखना है क्योंकि मन बड़ा कोमल है। अगर यह शुद्ध होगा तभी यह राग, द्वेष व काम क्रोध से बचा रहेगा। अशुद्ध मन डिपरेशन में रहता है। ऐसा मन ध्यान में भी नहीं लगता। इन्द्रियों पर कंट्रोल करने से भी मन शुद्ध होता है। अगर हमारा मन, शरीर, इन्द्रियां वश में हैं तो हम आत्मा के दर्शन करने के योग्य बन सकते हैं।

❋ ❋ ❋

83. संसार में शांति का एक मात्र उपाय योग है

संसार में शांति का एक मात्र उपाय योग है। अगर योग होगा तभी हम शांति से रहेंगे। गीता में लिखा है कि आत्मा भगवान का अंश है इसलिए आत्मा को दुख नहीं हो सकता। दुख तो आत्मा के साथ जुड़ी प्रकृति को होता है। जीव जब संसार में आता है तो वह मन व पांच इन्द्रियों को प्रकृति से खींच लेता है। प्रकृति में बड़े-बड़े गुण होते हैं तथा वह अपने आप कार्य करती है। आत्मा व ईश्वर निरलेप हैं। दुख प्रकृति के अंशों में संघर्ष से होता है। हमारा शरीर भी प्रकृति का एक अंश है। इसके दुखों को दूर करने के लिए योग के साधन बताए गए हैं। कुपित मल ही अधिकांश रोग शरीर में पैदा करता है। इसके लिए साधनों से अपने शरीर को भीतर से साफ रखा जा सकता है। शरीर के दुखों को दूर करने के लिए योग में षटकर्म, मुद्रा, प्राणायाम आदि हैं। इससे शरीर में दृढता भी आती है। मन भी प्रकृति का हिस्सा है। यह भी दुखी होता है। इसके लिए भी योग में साधन हैं। अगर हम मन में भगवान का चिंतन करें तो शांति

मिलेगी। शरीर, इन्द्रियों और मन के साथ बुद्धि भी जुड़ी है। बुद्धि में भी दुख होता है। इसे जब चिन्ता लग जाती है तो उसे हम डिपरैशन कहते हैं। यह बुद्धि का विकार है। इससे आदमी असंतुलित हो जाता है क्योंकि बुद्धि में हर वक्त संसार की उलझनें समाई रहती हैं। इसका ईलाज स्वाध्याय है। शास्त्र पढ़ना, समझना, विचार करना व संकल्प करना स्वाध्याय के अंग हैं। शास्त्र पढ़ते-पढ़ते बुद्धि स्थिर हो जाती है। उनका ज्ञान मन में बना रहता है। अगर प्रतिदिन योग करने वाला व्यक्ति सुखी नहीं होता तो उसे अपना आहार, विचार, चेष्ठा, सोना व जागना आदि पांच बातों का निरीक्षण करना चाहिए। दुनिया में जितने कर्म हैं उनके सात्विक, राजसिक व तामसिक तीन भेद हैं। सात्विक सुख देता है और तामसिक दुख। आयु को बढ़ाने वाला, मन को शुद्ध करने वाला, बिमारी को दूर करने वाला, अच्छे रसों वाला, स्थिर शक्ति देने वाला आहार ही सात्विक आहार है। इसके विपरीत का आहार तामसिक होगा जो हमें नुकसान देगा। अगर हमारे काम करने की विधि गलत होगी तो वह तामसिक चेष्ठा वाली होगी जोकि अन्त:

नुकसान देगी। ऐसा करने वाला कभी भी योग नहीं कर पाएगा। इसी तरह ब्रह्म महूर्त में जाग कर भगवान को याद करना भी सात्विक कर्म है। हर मनुष्य सुखी होना चाहता है लेकिन वह इसके लिए साधन आदि करने से दूर भागता है। इसीलिए उसे पूर्ण सुख नहीं मिलता। जैसे-जैसे संसार में योग का प्रचार हो रहा है लोगों को पता लग रहा है कि योग द्वारा ही उनके दुख दूर हो सकते हैं तथा योग बिना किसी खर्चे के किया जा सकता है।

❋ ❋ ❋

84. सामाजिक बुराईयों के निवारण में स्त्री की विशेष भूमिका

जिन कार्यों का परिणाम बुरा हो हमें उनसे दूर ही रहना चाहिए लेकिन जो कार्य मुश्किल दिखाई देने के बावजूद हितकर साबित हों उन्हें जरूर करना चाहिए। हमें सुबह उठकर योग के लिए बाहर निकलना कठिन लगता है लेकिन इसका परिणाम अच्छा होता है। योग करने वाला बिमारियों से दूर रहता है। आज समाज को मदिरापान का मजा आ रहा है लेकिन इसका परिणाम घातक होगा। हमारा समाजिक कर्त्तव्य है कि हम इस बुराई को समाज से दूर करें। समाज का प्रभाव हमारे परिवार पर भी पड़ेगा। हम इससे बच नहीं सकेंगे। पड़ोसियों के घर में उठने वाला धुंआ हमारे घर में भी आएगा। मदिरापान से परिवारों में झगड़े बढ़ेंगे। हमारे बच्चे इससे बच नहीं सकेंगे। शराब, मास व जुआ एक ऐसी तिकड़ी है जिसका उपभोग करने वाला एक न एक दिन आवश्य कंगाल हो जाएगा। इसके बावजूद शराब पीने की लत आज तेजी से फैल रही है। पति की

किडनी खराब होने पर सबसे पहले पत्नी को किडनी देने के लिए कहा जाता है। इस लिए स्त्रियों का यह कर्त्तव्य बनता है कि प्यार, शांति अथवा हठ से पति की शराब को छुड़ाएं। स्त्री का हठ बहुत मजबूत होता है। वह अच्छे बुरे की परवाह किए बिना अपने हठ को पूरा करती है। कैकेयी ने भरत के लिए राज्य मांगते हुए पति व राम की परवाह नहीं की। द्रौपदी ने अपनी बेइज्जती का बदला लिया। उसने देश का इतिहास ही बदल दिया। अगर उन स्त्रियों ने अपनी ताकत से इतिहास बदल दिया तो क्या आज की स्त्री पति की शराब नहीं छुड़ा सकती। इसी प्रकार रात्रि विवाह, दहेज प्रथा एवं कई अन्य कुरीतियों को समाप्त करने में भी नारी एक विशेष योगदान दे सकती है।

* * *

❖ योग साधन आश्रम होशियारपुर - प्रकाशन ❖

1. श्री योग महादिव्य रामायण (ग्यारह खण्डों में)
2. बाल काण्ड, वन काण्ड - गुटका
3. विनय काण्ड - गुटका
4. नित्य कर्म (नैमित्तिक कर्म सहित)
5. योगी सद्गुरु महात्म्य
6. श्री योग दिव्य गाथा-श्री प्रभु राम कहानी
7. श्री योग दिव्य कुसुम
8. योग मार्ग
9. योग दिव्य कहानियां
10. योग दिव्य यात्राएं
11. यौगिक स्वदेश विनय पत्रिका
12. योग के आसन
13. योग सुमन
14. योग के आसन और प्राणायाम
15. योग के आसन और योग मुद्रायें
16. योग के आसन, जीवन तत्व और यौवन तत्व
17. योगेश्वर श्री 1008 प्रभु रामलाल जी महाराज का संक्षिप्त 'जीवन परिचय',
18. योग पुष्पांजली
19. श्री 1008 स्वामी मुलखराज जी महाराज का संक्षिप्त जीवन चरित्र, द्वादश मासा और श्री सद्गुरु स्तोत्र सहित
20. योग निरीक्षण
21. योग दिव्य प्रवचन
22. योग समीक्षा

23. योग के 84 आसन
24. योग मार्गदर्शक
25. गुरुमाता चरित
26. चमन-चरित
27. चमन प्रकाश
28. चमन योग यात्राएं
29. चार पुष्प
30. कैवल्य विचार
31. योग उपदेश
32. योग भक्ति सार
33. गीता संदेश
34. प्रभु भक्तों के दिव्य अनुभव
35. सम्पूर्ण योग साधन निरीक्षण -चार्ट
36. योग के आसन - चार्ट

2. हिन्दू धर्म पर प्रकाशन

1. हिन्दू धर्म का संक्षिप्त इतिहास
2. हिन्दू धर्म का इतिहास (सम्पूर्ण)
3. हिन्दुत्व चेतना
4. हिन्दू नारी का इतिहास (वीरांगना शतक)
5. प्रवासी आत्मा
6. सतरह भूलें
7. बारह सुधार
8. वीर बावनी
9. शौर्य शतक

3. वेद सम्बन्धी प्रकाशन

1. वेद पञ्चाशती – 50 वेद मन्त्र सार्थ
2. वेद निरीक्षण – आर्य सम्राट इन्द्र
3. वेद विवेचन – वैदिक पांच देव
4. वेद विवेक – पाप अभिशाप (75 ऋग्वेद मन्त्र)
5. वेद संदेश – जीवो और जीने दो
6. वेद गुटका – 800 वेद मन्त्र सार्थ

4- English Books

1. The Yogic Shat Karma & the Yogic Cure of Colds
2. Yoga Divine Tales (Part I & Part II)
3. Yog Asanas
4. Complete Yoga at a Glance - Chart
5. Insight in Yoga (Yog Nirikshan)
6. Meditation Made Easy
7. Hindus' Dilemma
8. Veda Panchashati
9. Veda Vivek
10. Migratory Soul
11. Geeta Sandesh
12. Geeta Nirikshan
13. The Divine Information (Folder)

हठ योग के सात साधन

1 षट कर्म
2 आसन
3 मुद्रा
4 प्राणायाम
5 प्रत्याहार
6 ध्यान
7 समाधि

राज योग के आठ अंग

1 यम
2 नियम
3 आसन
4 प्राणायाम
5 प्रत्याहार
6 धारणा
7 ध्यान
8 समाधि

पांच यम

1 अहिंसा
2 सत्य
3 अस्तेय
4 ब्रह्मचर्य
5 अपरिग्रह

पांच नियम

1 शौच
2 सन्तोष
3 तप
4 स्वाध्याय
5 ईश्वर प्रणिधान